संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

ऋषि प्रसाद

हिन्दी

मूल्य : रु. ६/-
अंक : १९३
जनवरी २००९
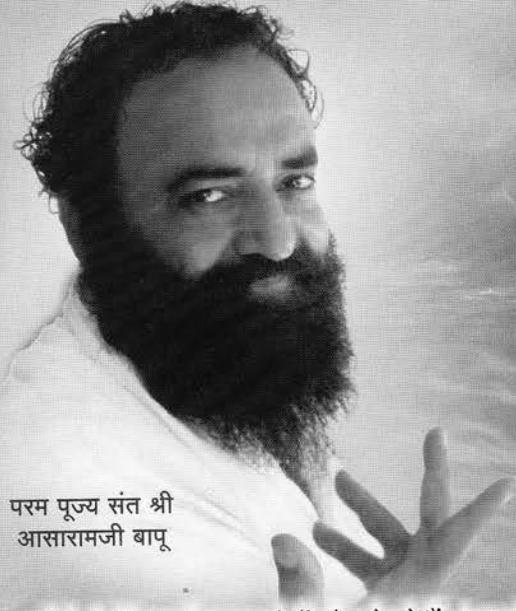
परम पूज्य संत श्री आसारामजी बापू

मोहक बाल-लीला करते हुए मुरलीधर श्रीकृष्ण

विदेशी चिंतक दंग रह जाते हैं और सोचते हैं : 'यह कौन-सा मेथड है हिन्दुस्तानियों के पास, जिससे वे अपने साथ बातचीत करनेवाला, द्विभुजी व चतुर्भुजी बननेवाला, अयोध्यावासियों को सरयू में प्रवेश कराकर अपने लोक में पहुँचानेवाला साकार भगवद्विग्रह प्रकट कर देते हैं ? हम समझ नहीं पाते, सिर खुजलाते रह जाते हैं।'

धरती पर ऐसी साधना-पद्धति कहीं नहीं जैसी हिन्दुस्तानियों के पास है । धन्य है भारत की संस्कृति ! पढ़ें पृष्ठ : ९
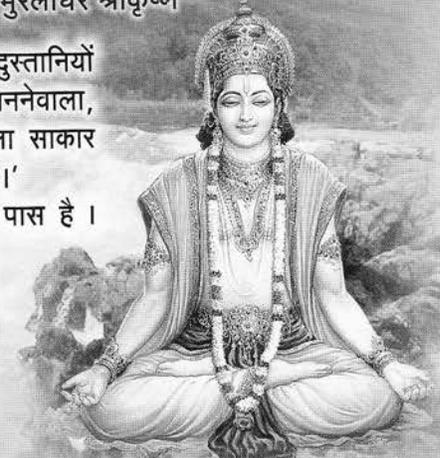
स्वधाम-गमन की वेला में श्रीराम अवतार

मार्कण्डेयजी की रक्षा हेतु शिवजी का आवेश अवतार
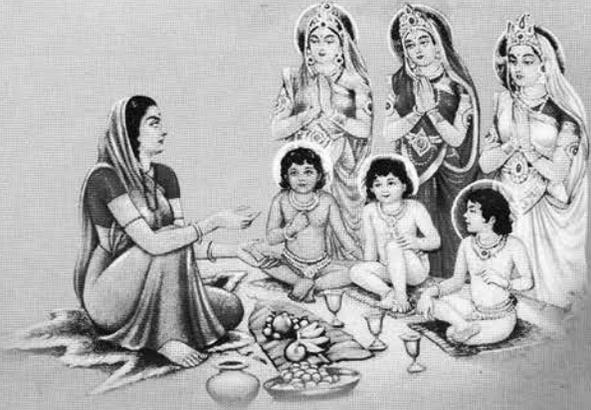
अनसूयाजी के आगे बालक बने ब्रह्मा-विष्णु-महेश

विभिन्न क्षेत्रों में निकाली गयीं संकीर्तन यात्राओं के दृश्य

पुणे (महा.)

अंबरनाथ, जि. ठाणे (महा.)
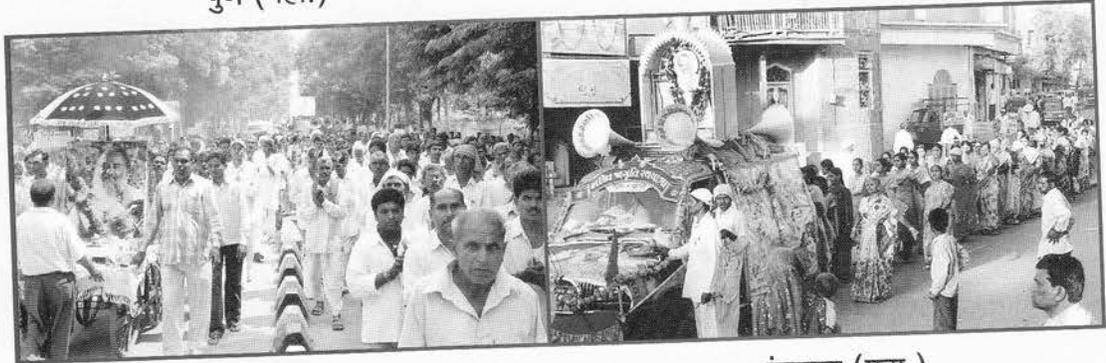
थर्मल, जि. खेड़ा (गुज.)

नंदुरबार (महा.)

बरपाली, जि. बरगढ़ (उड़ीसा)

आमेट, जि. राजसमन्द (राज.)
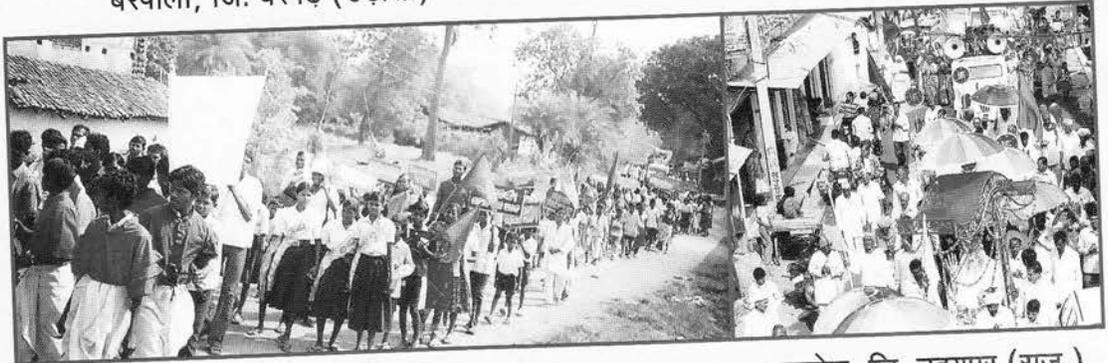
जमनकीरा, जि. सम्बलपुर (उड़ीसा)

झाड़ोल, जि. उदयपुर (राज.)

ऋषि प्रसाद

मासिक पत्रिका

हिन्दी, गुजराती, मराठी, उड़िया, तेलगू व अंग्रेजी भाषाओं में प्रकाशित

वर्ष : १९	अंक : १९३
जनवरी २००९	मूल्य : रु. ६-००
पौष-माघ	वि.सं.२०६५

सदस्यता शुल्क (डाक खर्च सहित)

भारत में

(१) वार्षिक	: रु. ६०/-
(२) द्विवार्षिक	: रु. १००/-
(३) पंचवार्षिक	: रु. २२५/-
(४) आजीवन	: रु. ५००/-

अन्य देशों में

(१) वार्षिक	: US $ 20
(२) द्विवार्षिक	: US $ 40
(३) पंचवार्षिक	: US $ 80

ऋषि प्रसाद (अंग्रेजी)	वार्षिक	द्विवार्षिक	पंचवार्षिक
भारत में	रु.७०	रु.१३५	रु.३२५
अन्य देशों में	US$20	US$40	US$80

कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नकद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनीऑर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

संपर्क पता : 'ऋषि प्रसाद', श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, मोटेरा, अहमदाबाद, पो. साबरमती-३८०००५ (गुजरात)।

ऋषि प्रसाद से संबंधित कार्य के लिए फोन नं. : (०७९) ३९८७७७१४, ६६११५७१४.

अन्य जानकारी हेतु : (०७९) २७५०५०१०-११, ३९८७७७८८, ६६११५५००.

e-mail : ashramindia@ashram.org

web-site : www.ashram.org

स्वामी : संत श्री आसारामजी आश्रम

प्रकाशक और मुद्रक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी

प्रकाशन स्थल : श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, मोटेरा, अहमदाबाद, पो. साबरमती-३८०००५. गुजरात

मुद्रण स्थल : विनय प्रिंटिंग प्रेस, ''सुदर्शन'', मिठाखली अंडरब्रीज के पास, नवरंगपुरा, अहमदाबाद- ३८९०००९. (गुजरात)

सम्पादक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी

सहसम्पादक : डॉ. प्रे. खो. मकवाणा, श्रीनिवास

Subject to Ahmedabad Jurisdiction

अनुक्रमणिका

(१) सत्संग सुमन — २
* उनकी सहजावस्था को वे ही जानते हैं

(२) गुरु संदेश — ५
* अपने घर में देख !

(३) भक्ति भागीरथी — ६
* नर को बस करिबौ कहाँ नारायण बस होय

(४) उपासना अमृत — ८
* माघ मास का माहात्म्य

(५) विचार मंथन — ९
* 'यह कौन-सा मेथड है ?'

(६) सांस्कृतिक गौरव — १२
* विश्वगुरु भारत

(७) चिंतनधारा — १३
* समस्याएँ - विकास का साधन

(८) मन एक कल्पवृक्ष — १४
* अपनी डफली अपना राग

(९) तत्त्व दर्शन — १५
* सृष्टि कैसे बनी ?

(१०) मधु संचय — १६
* अवश्यमेव भोक्तव्यं...

(११) नैतिक शिक्षा — १७
* प्रणाम - विनय का सूचक

(१२) ज्ञान गंगोत्री — १८
* संस्कारों का खेल

(१३) सुखमय जीवन के सोपान — २०
* जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना

(१४) चिंतनिका — २१

(१५) मुक्ति मंथन — २२
* बंधन और मुक्ति कर्म से

(१६) जीवन पथदर्शन — २४
* सफलता का रहस्य

(१७) शास्त्र प्रसाद — २५
* वे पाप जो प्रायश्चित्तरहित हैं

(१८) योगामृत — २६
* योगमुद्रासन

(१९) शरीर-स्वास्थ्य — २७
* निद्रा-विचार

(२०) हिन्दू समाज व धर्माचार्यों को बदनाम करने का विश्वव्यापी षड्यंत्र — २८

(२१) भक्तों के अनुभव — २९

(२२) संस्था समाचार — ३०

उनकी सहजावस्था को वे ही जानते हैं

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

एक बार एक पंडित श्री रमण महर्षि के पास गया और बातचीत के दौरान उसने उनसे कोई प्रश्न किया। महर्षि ने उत्तर दिया। उसने दूसरा प्रश्न किया, महर्षि ने उसका भी उत्तर दिया। लोगों के सामने अपनेको विशेष दिखाने के लिए उसने फिर से प्रश्न किया तो महर्षिजी पंडित पर बिगड़े, बोले : ''क्या समझता है पंडित का बच्चा ?'' उठाया डंडा, पंडित डर के भागा। पंडित आगे और रमण महर्षि डंडा लेकर पीछे ! देखनेवाले दंग रह गये। महर्षि बहुत दूर तक उसको भगाकर आये और दूसरे ही क्षण उतने ही शांत, उतने ही आनंदित थे। कितना सहज जीवन है संतों का ! प्रसिद्ध लेखक पॉल ब्रंटन बुद्धिमान था, उसने लिखा कि 'महर्षि कितने सहज हैं ! कितनी ऊँची अवस्था है ! कैसा स्वाभाविक जीवन है !'

'लोग क्या कहेंगे, वे क्या कहेंगे ?' नहीं ! **नानक बोले सहज स्वभाव।** उन महापुरुषों के दिल में न द्वेष होता है, न नफरत होती है, न राग होता है। उनके जीवन में तो सहजता होती है।

एक बार सहारनपुर में किसी संचालक ने लापरवाही की और लोगों में थोड़ी अव्यवस्था हो गयी तो मैंने संचालकों को बुलाकर डाँटा, उठ-बैठ करायी तो मीडियावालों की ऐसी ऊँची सूझबूझ कि दूसरे दिन अखबारों में आया : 'बापूजी ने तो अपने संचालकों की भी क्लास ले ली। बापूजी की तटस्थता और व्यवहार-कुशलता से 'पिनड्रॉप साइलेंस' रहता है, अव्यवस्था होने से बच जाती है। बापूजी एक सत्संग करनेवाले संत भी हैं और साथ-साथ में दूरद्रष्टा भी हैं।'

यदि लेखकों की मति किसी दुर्भावना से ग्रस्त होती तो वे यह भी लिख सकते थे कि 'रमण महर्षि को आपा नहीं खोना चाहिए था, फलाने संत को ऐसा नहीं करना चाहिए था...' वास्तव में जिनका आपा होता है वे ही सँभालें, उनका ही आपा खोये और रहे। आत्मारामी महापुरुषों का आपा होता ही नहीं, सहज स्वभाव... **नानक बोले सहज स्वभाव।**

'गीता' में कहा गया है :

सहजं कर्म कौन्तेय सदोषमपि न त्यजेत्।

'हे कुंतीपुत्र ! दोषयुक्त होने पर भी सहज कर्म को नहीं त्यागना चाहिए।' **(गीता : १८.४८)**

ज्ञानी में सदोष कर्म केवल दिखते हैं लेकिन सहज में आ गये तो ज्ञानी वे भी कर देता है। जैसे - लंका में हनुमानजी को तंग किया गया और उनकी पूँछ पर कपड़ा लपेटा जा रहा था तो हनुमानजी बोले : 'ठीक है, चलो लपेटो !' तेल डालने लगे तो बोले : 'डालो' और फिर सारी लंका में आग लगा दी। अब सात्त्विक दृष्टि से सोचनेवाले इसे हनुमानजी का कौशल्य-विनोद समझते हैं लेकिन जो रावण के भगत और राम के विरोधी होंगे, वे हनुमानजी के लिए अनाप-शनाप बोलेंगे।

तो यह जगत कैसा है ? जैसा आपके मन का भाव है वैसा है। सुर भाव है, सज्जनता है तो आप सद्गुण का और असुर भाव है तो आप दोषारोपण का नजरिया ले लेंगे। कैमरे से जिस ऐंगल से फोटो लो वैसा ही दृश्य दिखता है।

सभी महापुरुषों का एक जैसा स्वभाव नहीं होता। जैसे - दुर्वासा मुनि ज्ञानी थे, साक्षात्कारी थे और जरा-जरा-सी बात में ऐसा डाँट देते कि सुननेवाले के कान से धुआँ निकल जाय। लोगों को लगे कि 'लो, महात्मा होकर ऐसा करते हैं ?' अरे ! ज्ञानी के लिए यह करो, यह न करो ऐसा कोई बंधन नहीं है।

एक बार दुर्वासा मुनि जंगल में बैठे थे। सामने दूर रास्ते से एक पथिक जा रहा था, उसे जोर-से चिल्लाकर बुलाया : ''इधर आ !''

आधा मील दूर से चलकर आया, बोला : ''जी महाराज ?''

''अरे ! क्या जी महाराज ! कहाँ गया था ?''

''तपस्या करने गया था। देवी माँ की उपासना की और देवी प्रकट हुईं। मैं निःसंतान था, वैद्यों ने बोला था तुम्हें संतान नहीं होगी। देवी माँ ने कृपा करके मुझे संतानप्राप्ति का वर दिया है।''

''जाओ ! वरदान रद्द है, नहीं होगा।''

ये दुर्वासा महर्षि हैं। अब लोगों को लगेगा कि ये कैसे महात्मा हैं ? लेकिन जो बुद्धिमान होंगे वे समझ जायेंगे कि इसके पीछे भी भगवान का संकल्प है। दुर्वासा ऋषि ने द्वेष से नहीं बुलाया था, ब्राह्मण के प्रति संत की कृपा कहो या परमेश्वर की प्रेरणा कहो। संत ने सोचा होगा कि इस इलाके में आया, संत की दृष्टि पड़ी, इतना भजन किया फिर संतान की वासना बनी रही तो फँसेगा और संतान हुई तो आसक्ति होगी, शायद दुःख देनेवाली हो या संसार में फँसानेवाली हो। इसलिए महापुरुष ने प्रारब्ध काट दिया।

मेटत कठिन कुअंक भाल के।

तपस्या करके वांछित फल पाना, इच्छा पूरी करना, इसकी अपेक्षा इच्छा निवृत्त करना श्रेष्ठ साधना है। इच्छा पूरी हो गयी तो फिर वैसे-के-वैसे। तपस्या से भी सत्संग का महत्त्व ज्यादा है। यह दिखाने के लिए ईश्वर ने जीवन्मुक्त महापुरुष दुर्वासाजी से ऐसा व्यवहार करवाया होगा।

तो बकनेवाले बकते रहें कि 'दुर्वासाजी को, रमण महर्षि को ऐसा नहीं करना चाहिए था' लेकिन उनका तो सहज स्वभाव था।

जो करे सब सहज में, सो साहेब का लाल।

वृन्दावन की बात है। एक महात्मा सत्संग कर रहे थे। मनचले स्वभाव की एक औरत आयी और बोली : ''अरे ! बैठा-बैठा मुफ्त का खावे है और फिर भाषण करे है।''

महात्मा के लिए कुछ-का-कुछ बोलने लगी। किसी साधु ने कहा कि ''महाराज ! वह आपके लिए गंदा बोल रही है।''

''मेरे लिए कहाँ बोल रही है ? मेरा नाम थोड़े ही लेती है ! वह तो ऐसे ही बोलती है।''

उस बाई ने सुन लिया तो महाराज का नाम लेकर बोलने लगी। लोग बोले : ''बाबा ! अब तो आपका नाम लेकर बोल रही है।''

''इस नाम के तो कई लोग हैं दुनिया में। यह अकेले मेरा ही नाम है ऐसा मैं क्यों मानूँ ! किसीको भी सुनाती होगी।''

तो बाई और चिढ़ गयी, बोली : ''तेरे को कह रही हूँ तेरे को ! मुंडा-मुंडा-टालिया !''

लोग बोले : ''बाबा ! अब तो आप ही के सामने इशारा है।''

बाबा बोले : ''मेरे को नहीं कह रही है, यह तो इस शरीर को कह रही है। यह मेरा पाँचवाँ खोखा है। इसके अंदर चार खोखे और हैं। यह तो अन्नमय शरीर को देख रही है और उसीको कह रही है, मैं अन्नमय शरीर तो हूँ नहीं। अन्नमय शरीर तो मरने के बाद यहीं पड़ा रहेगा फिर भी मैं तो रहूँगा। मेरे तक तो यह पहुँच नहीं सकती। अभी तो इसकी पहुँच अन्नमय शरीर तक है। जो कुछ भी कह रही है, गुस्सा कर रही है, गालियाँ दे रही है, मेरे इस अन्नमय शरीर को, पाँचवें शरीर को दे रही है। मैं तो इन सभीसे न्यारा हूँ तो मेरे

को कहाँ दे रही है !''

''अरे इतनी गालियाँ बोल रही हूँ और 'मेरे को नहीं दे रही, मेरे को नहीं दे रही है।'- क्या यह कथा कर रहे हो ?''

बाई सुनाये जा रही थी और महाराज हँसे जा रहे थे। कोई बोले : 'ये क्या महाराज हैं ? कोई इज्जत है इनकी ? दो पैसे की बाई ऐसा सुनाये तो फिर कौन साधु-संत बनेगा ?' अब देखनेवालों का नजरिया कैसा है ? महाराज में द्वेषबुद्धि होगी तो कोई बोलेगा : 'ऐसा कोई महाराज होता है !' और समझदार होगा तो बोलेगा : 'हमारे महाराज कितने बढ़िया हैं !' अब महाराज बढ़िया हैं कि घटिया यह तो भगवान जानते हैं लेकिन आपका मन द्वैत के तराजू में डोलता रहता है। आप किसीके डुलाने से या अपने राग-द्वेष के कारण डोलते रहो अथवा इन दोनों के बीच का ज्ञान का नेत्र खोलकर डुलानों को नियंत्रित करके अपने आत्मदेव को जानो, आपके हाथ की बात है।

महात्मा विलक्षण होते हैं। जैसे रमण महर्षि कभी-कभी बिगड़ते हैं, दुर्वासाजी जरा-जरा-सी बात में बिगड़ जाते हैं और तीसरे हैं कि कभी बिगड़ते ही नहीं हैं और तीनों ही प्रकार के महापुरुष जीवन्मुक्त हैं। ज्ञानी संतों के लिए कोई तराजू बाँधकर बैठे कि 'इन्हें ऐसा नहीं करना चाहिए, वैसा नहीं करना चाहिए' तो वह द्वेष से प्रेरित होकर करता है या पैसे के लालच से प्रेरित होकर करता है। उसके पीछे क्या है वह जानना चाहिए।

जिनको परमात्मा का सुख मिल गया वे व्यवहार में डंडा लेकर दिख पड़ते हों, तब भी **'क्रुद्धोऽपि न क्रुद्धते, खिन्नोऽपि न खिद्यते'** खिन्न जैसे दिखते हैं फिर भी खिन्न नहीं होते। **'रुष्टोऽपि न रुष्टते...'** रुष्ट होते दिखते हैं फिर भी रुष्ट नहीं होते। **तस्य तुलना केन जायते ?** उनकी तुलना आप किससे करोगे ? उनकी उस आश्चर्यमय दशा को उनके सदृश अन्य ज्ञानी महापुरुष ही जानते हैं। रमण महर्षि जैसे महापुरुष को आप अपनी बाहर की मति-गति से, द्वेष से तौलोगे तो आपका आसुरी भाव है। समझदारी से तौलोगे तो आपका दैवी भाव है, सुर भाव है। लेकिन वे महापुरुष तो भावातीत, गुणातीत, देहातीत, देशातीत, कालातीत, पाँचों शरीरों से अतीत परमात्मा में विश्रांति पा रहे हैं। आपके तौलने से उनको कोई फर्क नहीं पड़ता। आपकी मति भ्रष्ट है तो द्वेष से तौलो, आपकी मति श्रेष्ठ है तो आप प्रीति से तौलो। बाकी वे आपके तराजू में तुलें ऐसे नहीं होते।

अष्टावक्रजी महाराज कहते हैं :

न प्रीयते वन्द्यमानो निन्द्यमानो न कुप्यति।
नैवोद्विजति मरणे जीवने नाभिनन्दति ॥

'मुक्त पुरुष न स्तुति किये जाने पर प्रसन्न होता है, न निंदित होने पर क्रुद्ध होता है। न मृत्यु में उद्विग्न होता है, न जीवन में हर्षित होता है।'

(अष्टावक्र गीता : १८.९९)

जीवन्मुक्त ज्ञानी इतर पुरुषों द्वारा स्तुति को प्राप्त हुआ भी हर्ष को नहीं प्राप्त होता है और इतर पुरुषों द्वारा निंदा की जाने पर भी क्रोध को नहीं प्राप्त होता है और मृत्यु के आने पर भी वह भय को नहीं प्राप्त होता है क्योंकि उसकी दृष्टि में आत्मा नित्य है, जन्म-मरण कोई वस्तु नहीं है। उसको न अधिक जीने की इच्छा है, न मरने का भय है, वह सदा एकरस है।

रमण महर्षि डंडा लेकर पंडित के पीछे पड़ें, दो-पाँच खरी-खोटी सुनाकर उसे दूर छोड़कर आवें उनकी मौज है अथवा कोई मनचली माई उन दूसरे महापुरुष को मुंडा कहे, टालिया कहती रहे और वे चुप बैठें, सुनें उनकी मौज की बात है। उनकी तुलना किसीसे नहीं की जा सकती है। वे ज्ञानी अतुलनीय होते हैं। तो अपना लक्ष्य ज्ञानी के अनुभव को अपना अनुभव बनाने का रखना चाहिए। ❐

अपने घर में देख !

- पूज्य बापूजी

सूफी फकीर लोग कहानी सुनाया करते हैं कि प्रभात को कोई अपने खेत की रक्षा करने के लिए जा रहा था। रास्ते में उसे एक गठरी मिली। देखा कि इसमें कंकड़-पत्थर हैं । उसने गठरी ली और खेत में पहुँचा। खेत के पास ही एक नदी थी। वह एक-एक कंकड़-पत्थर गिलोल में डाल-डाल के फेंकने लगा। इतने में कोई जौहरी वहाँ स्नान करने आया। उसने स्नान किया तो देखा चमकीला पत्थर... उठाया तो हीरा ! वह उस व्यक्ति के पास गया जो हीरों को पत्थर समझ के गिलोल में डाल-डाल के फेंक रहा था। उसके पास एक नग बाकी बचा था।

जौहरी ने कहा : ''पागल ! यह तू क्या कर रहा है ? हीरा गिलोल में डालकर फेंक रहा है !''

वह बोला : ''हीरा क्या होता है ?''

''यह दे दे, तेरे को मैं इसके ५० रुपये देता हूँ।''

फिर उसने देखा कि ''५० रुपये... इसके ! इसके तो ज्यादा होने चाहिए।''

''अच्छा १०० रुपये देता हूँ।''

''मैं जरा बाजार में दिखाऊँगा, पूछूँगा।''

''अच्छा, २०० ले ले।''

ऐसा करते-करते उस जौहरी ने ११०० रुपये में वह हीरा ले लिया। उस व्यक्ति ने रुपये लेकर वह हीरा तो दे दिया लेकिन वह छाती कूट के रोने लगा कि 'हाय-रे-हाय ! मैंने इतने हीरे नदी में बहा दिये। मैंने कंकड़ समझकर हीरों को खो दिया। मैं कितना मूर्ख हूँ, कितना बेवकूफ हूँ !'

उससे भी ज्यादा बेवकूफी हमलोगों की है। कहाँ तो सच्चिदानंद परमात्मा, कहाँ तो ब्रह्मा, विष्णु, महेश का पद, कहाँ तो ३३ करोड़ देवताओं से भी ऊँचा पद और कहाँ फातमा, अमथा, शकरिया का बाप होना तथा उनकी मोह-माया में जीवन पूरा करके अपने आत्मनाथ से मिले बिना अनाथ होकर श्मशान में जल मरना !

आप शिवजी से रत्ती भर कम नहीं हैं। आप ब्रह्माजी से तिनका भर भी कम नहीं हैं । आप श्रीकृष्ण से धागा भर भी कम नहीं हैं । आप रामकृष्ण परमहंसजी से एक डोरा भर भी कम नहीं हैं । आप भगवत्पाद लीलाशाहजी बापू से एक तिल भर भी कम नहीं हैं और आप आसाराम बापू से एक आधा तिल भी कम नहीं हैं।

भगवान कहते हैं :

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः ।

'हे अर्जुन ! मैं सब भूतों के हृदय में स्थित सबका आत्मा हूँ।' **(गीता : १०.२०)**

लेकिन चिल्ला रहे हैं : 'हे कृष्ण ! तू दया कर। हे राम ! तू दया कर। हे अमथा काका ! तू दया कर। हे सेंधी माता ! तू दया कर...' पर यहाँ क्या है ?

इन्सान की बदबख्ती अंदाज से बाहर है ।
कमबख्त खुदा होकर बंदा नजर आता है ॥

शोधी ले शोधी ले,
निज घरमां पेख, बहार नहि मळे ।

ढूँढ़ ले-ढूँढ़ ले, अपने घर में देख अर्थात् अपने में गोता मार और जान ले निज स्वरूप को, बाहर नहीं मिलेगा। □

नर को बस करिबौ कहाँ नारायण बस होय

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

अब्दुल रहीम खानखाना अकबर के नवरत्नों में से एक थे । एक प्रकार से वे अपनी रियासत के राजा ही थे परंतु हृदय के रहीम (दयालु) थे । वे मुसलिम थे फिर भी भगवान श्रीकृष्ण को अपना इष्टदेव मानते थे ।

सन् १५९३ की एक घटित घटना है। अकबर ने उन्हें दक्षिण भारत में राज्य-विस्तार के लिए भेजा । रहीम की शूरवीरता देखकर शत्रु राजा ने उनको संदेशा भेजा कि 'आप मेरे यहाँ पधारो न भोजन करने ! हम मित्रता करें ।'

जिसका हृदय भक्ति, स्नेह से सम्पन्न हुआ हो, उसे अहंकार बढ़ाकर सत्ता बढ़े ऐसा नहीं लगता । रहीम के जीवन में श्रीकृष्ण की भक्ति थी इसलिए उन्होंने आपसी स्नेह बढ़ाने का न्योता स्वीकार कर लिया । एक अंगरक्षक को साथ लेकर रहीम उस राजा के यहाँ भोजन करने गये । किले के फाटक के आगे एक बालक खड़ा था, वह बोला :

''ठहरो-ठहरो ! तुम कहाँ जा रहे हो ?''

''राजा के यहाँ भोजन करने ।''

''नहीं करना भोजन । वापस चले जाओ ।''

''ऐ रहीम खानखाना को वापस करनेवाले बच्चे ! अभी अक्ल के कच्चे हो । मैंने मित्र को वचन दिया है ।''

''फिर भी नहीं जाओ ।''

''अरे, तुम बोलते हो तो क्या है ? कोई रास्ते चलनेवाला बच्चा बोल दे- 'ऐसा नहीं करो' तो क्या मैं माननेवाला हूँ ? मैं अपने सलाहकारों की भी बात इतनी जल्दी नहीं मानता हूँ तो रास्ते जानेवाले बच्चे की मानूँगा ?''

बच्चा समझाता गया और रहीम सुनकर आश्चर्य करते गये । बोले : ''तुम इतना आग्रह क्यों कर रहे हो कि मैं भोजन करने न जाऊँ ? राजा ने मैत्री के लिए हाथ बढ़ाया है तो हम तो मैत्री में मानते हैं ।''

''भले किसी मैत्री-बैत्री में मानो लेकिन मैं बोलता हूँ भोजन करने मत जाओ । राजा ने भोजन में विष मिला दिया है ।''

''क्या ?''

''हाँ ।''

''मैंने वचन दिया है कि मैं भोजन करने आऊँगा । बच्चों की बातें मानकर मैं दिया हुआ वचन तोड़ दूँ और झूठा पड़ूँ ?''

''झूठे पड़ो तो पड़ो लेकिन भोजन करने मत जाओ । काहे को जा रहे हो मरने ?''

रहीम ने दोहा उच्चारा :

अमी पियावत मान बिनु, रहिमन हमें न सुहाय ।
मान सहित मरिबौ भलौ, जो विष देय पिलाय ॥

''यदि कोई बिना मान के अर्थात् बेमन से बुलाकर अमृत पिलाय तो इस प्रकार अपमानित होना हमें नहीं भाता । इसके विपरीत यदि कोई शत्रु आदरसहित, प्रेमसहित विष भी पिला दे तो उसे पीकर मरना ज्यादा ठीक समझते हैं ।

राजा ने प्रेमपूर्वक मित्रता का हाथ बढ़ाया है तो अब चाहे विष भी दे दे, कोई बात नहीं । मैं तो जाऊँगा ।''

''अरे ! क्या जाऊँगा-जाऊँगा ? जब मैं बोलता हूँ मत जाओ ।''

''ऐ बालक ! इतना अधिकारपूर्वक कैसे

बोलता है ? मैं तेरी आज्ञा माननेवाला नहीं हूँ।''

''मेरी आज्ञा क्यों नहीं मानोगे ? माननी पड़ेगी।''

''रास्ते जानेवाला बच्चा और रहीम से आज्ञा मनवा ले ! बालक ! तू मेरा क्या लगता है कि मैं तेरा आदेश मानूँ ? क्या तू मेरा इष्टदेव भगवान श्रीकृष्ण है, जो दिया हुआ वचन मैं तोड़ूँ और तेरी बात मानूँ ?''

''अगर मैं श्रीकृष्ण ही होऊँ तो ?''

''फिर तुम्हारी बात मानूँगा।''

''तो मैं श्रीकृष्ण हूँ, बात मान लो।''

''नहीं, बालक रूप में हम विश्वास नहीं करते, प्रकट होकर दिखाओ।''

रास्ता रोकनेवाला नन्हा-मुन्ना बालक अपने असली रूप में प्रकट हुआ। भगवान श्रीकृष्ण का दिव्य विग्रह देखकर रहीम घोड़े पर से उतर के भगवान के चरणों में गिरे तो श्रीकृष्ण अंतर्धान हो गये।

भगवान भक्त के लिए कितना वात्सल्य छलकाते हैं ! क्या पड़ी थी ? नहीं मानता था तो मुआ जाय। पर नहीं ! आखिर नहीं जाने दिया तो नहीं जाने दिया।

रहीम ने किले पर चढ़ाई कर दी और देखते-ही-देखते उस धोखेबाज राजा को बंदी बनाकर अपने सामने बुलाया। रहीम बोले : ''क्यों ! दोस्ती का हाथ बढ़ाते-बढ़ाते मुझे जहर देकर मारने की साजिश !''

राजा चकित हो गया।

रहीम : ''आपने मित्रता की बात कही थी तो मैं आपको मृत्युदण्ड तो नहीं दूँगा लेकिन इतना धोखा !''

राजा : ''मेरा तो अपराध है लेकिन यह आपको पता कैसे चला ? मैंने अपने विश्वासू रसोइये से खाना बनवाया और जहर देने की बात उसको भी पता न चले ऐसी मैंने व्यवस्था की थी। आपको किसने बताया ?''

''छोड़ो इस बात को।''

''नहीं। भले ही आप मुझे मृत्युदण्ड दे दो लेकिन यह बात तो मुझे कहो।''

रहीम बोले : ''जो सर्वेश्वर है, परमेश्वर है, प्राणिमात्र का अंतरात्मा है उसको मैं कृष्ण रूप में नवाजता हूँ, उसीका मैं सिजदा करता हूँ। वही बालक होकर आया क्योंकि अंदर की आवाज तो मैं मानने को तैयार नहीं था। मैंने बालक रूप में भी उसकी बात नहीं मानी, तब श्रीकृष्ण ने प्रकट रूप में आदेश दिया तो हमें उसकी बात माननी पड़ी। कैसे हैं इष्टदेव !''

''रहीम ! आपने श्रीकृष्ण की भक्ति का मर्म जाना है। अब चाहे आप मुझे मृत्युदण्ड दो या जीवनदान दो लेकिन अब यह जीवन श्रीकृष्ण के लिए है।''

''आपका जीवन श्रीकृष्ण के लिए है तो मैं आपके लिए और आप मेरे लिए।'' रहीम ने राजा को गले लगा लिया और दोनों उस दिन से सच्चे मित्र बन गये।

रहीम बड़े उच्चकोटि के भक्तकवि थे। उन्होंने भगवद्भक्ति, नीति आदि अनेक विषयों पर सारगर्भित दोहे रचे जो समाज में आज भी लोकप्रिय हैं। रहीम कहते हैं :

रहिमन मन ही लगाय के, देखि लऊ किन कोय।
नर को बस करिबौ कहाँ, नारायण बस होय॥
रहिमन रोइबो कौन विधि, हंसिबो कौन विचार।
गये सो आवन को नहीं, रहे सो जावनहार॥

इस संसार के लिए हँसना-रोना क्या ?

प्रीतम छवि नैनन बसी, पर छवि कहाँ समाय।
भरी सराय रहीम लखि, पथिक आप फिरि जाय॥

एक बार इन आँखों में प्रियतम बस गया तो वहाँ किसी और के लिए कोई स्थान नहीं रहता। सराय में स्थान नहीं होता तो लोग स्वतः ही लौट जाते हैं। ❐
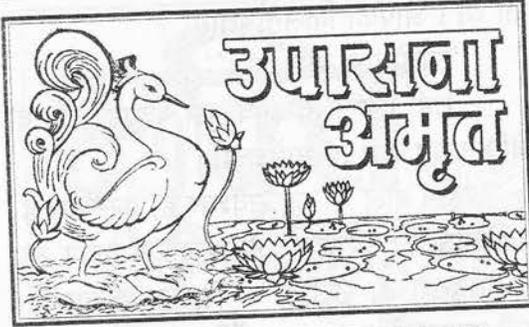
माघ मास का माहात्म्य

(माघ मास : ११ जनवरी से ९ फरवरी)

माघ मास के माहात्म्य का वर्णन करते हुए कहा गया है कि व्रत, दान व तपस्या से भी भगवान श्रीहरि को उतनी प्रसन्नता नहीं होती, जितनी माघ मास में ब्राह्ममुहूर्त में उठकर स्नानमात्र से होती है। अतः सभी पापों से मुक्ति व भगवान की प्रीति प्राप्त करने के लिए प्रत्येक मनुष्य को माघ-स्नान व्रत करना चाहिए। इसका प्रारम्भ पौष की पूर्णिमा से होता है।

माघ मास की ऐसी विशेषता है कि इसमें जहाँ कहीं भी जल हो, वह गंगाजल के समान होता है। इस मास की प्रत्येक तिथि पर्व है। कदाचित् अशक्तावस्था में पूरे मास का नियम न ले सकें तो शास्त्रों ने यह भी व्यवस्था की है कि तीन दिन अथवा एक दिन अवश्य माघ-स्नान व्रत का पालन करें। इस मास में स्नान, दान, उपवास और भगवत्पूजा अत्यंत फलदायी है।

माघ मास के कृष्ण पक्ष की एकादशी 'षट्तिला एकादशी' के नाम से जानी जाती है। इस दिन (२१ जनवरी को) काले तिल तथा काली गाय के दान का भी बड़ा माहात्म्य है। तिलमिश्रित जल से स्नान, तिल का उबटन, तिल से हवन, तिलमिश्रित जल का पान व तर्पण, तिल का भोजन, तिल का दान - ये छः कर्म पाप का नाश करनेवाले हैं।

माघ मास के कृष्ण पक्ष की अमावस्या 'मौनी अमावस्या' के रूप में प्रसिद्ध है। इस पवित्र तिथि पर (२६ जनवरी को) मौन रहकर अथवा मुनियों के समान आचरणपूर्वक स्नान-दान करने का विशेष महत्त्व है। अमावस्या के दिन सोमवार का योग होने पर उस दिन देवताओं को भी दुर्लभ हो ऐसा पुण्यकाल होता है क्योंकि गंगा, पुष्कर एवं दिव्य अंतरिक्ष और भूमि के जो सब तीर्थ हैं, वे 'सोमवती (दर्श) अमावस्या' के दिन जप, ध्यान, पूजन करने पर विशेष धर्मलाभ प्रदान करते हैं।

सोमवती अमावस्या, रविवारी सप्तमी, मंगलवारी चतुर्थी, बुधवारी अष्टमी - ये चार तिथियाँ सूर्यग्रहण के बराबर कही गयी हैं। इनमें किया गया स्नान, दान व श्राद्ध अक्षय होता है।

माघ शुक्ल पंचमी अर्थात् 'वसंत पंचमी' को सरस्वती माँ का आविर्भाव-दिवस माना जाता है। इस दिन (३१ जनवरी को) प्रातः सरस्वती-पूजन करना चाहिए। पुस्तक और लेखनी (कलम) में भी देवी सरस्वती का निवासस्थान माना जाता है, अतः उनकी भी पूजा की जाती है।

शुक्ल पक्ष की सप्तमी को 'अचला सप्तमी' कहते हैं। षष्ठी के दिन एक बार भोजन करके सप्तमी (२ फरवरी) को सूर्योदय से पूर्व स्नान करने से पाप-नाश, रूप, सुख-सौभाग्य और सद्गति प्राप्त होती है।

ऐसे तो माघ की प्रत्येक तिथि पुण्यपर्व है तथापि उनमें भी माघी पूर्णिमा का धार्मिक दृष्टि से बहुत महत्त्व है। इस दिन (९ फरवरी को) स्नानादि से निवृत्त होकर भगवत्पूजन, श्राद्ध तथा दान का विशेष फल है। जो इस दिन भगवान शिव की विधिपूर्वक पूजा करता है, वह अश्वमेध यज्ञ का फल पाकर भगवान विष्णु के लोक में प्रतिष्ठित होता है।

माघी पूर्णिमा के दिन तिल, सूती कपड़े, कम्बल, रत्न, पगड़ी, जूते आदि का अपने वैभव के अनुसार दान करके मनुष्य स्वर्गलोक में सुखी होता है। 'मत्स्य पुराण' के अनुसार इस दिन जो व्यक्ति 'ब्रह्मवैवर्त पुराण' का दान करता है, उसे ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है। ❐

'यह कौन-सा मेथड है ?'

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

विदेश के मनीषियों ने, बड़े-बड़े विद्वानों ने, अच्छे-खासे 'इंटेलिजेंट' (बुद्धिमान) कहलानेवाले लोगों ने यह स्वीकार किया कि भारत का तत्त्वज्ञान, फिलासफी, भारतीय दर्शन समझ में तो आ जाता है कि एक ही सत्ता है, अनेक अंतःकरणों में और अनेक वस्तु-व्यक्तियों में वह एक ही परमात्मा है। उसके अनेक-अनेक नाम और रूप हैं। यह समझ में तो आ जाता है, 'बट' (लेकिन)...

लेकिन हिन्दुस्तानियों के पास यह कौन-सा मेथड (पद्धति, युक्ति) है कि जो सर्वव्यापक है, सर्वेश्वर है, परमेश्वर है, उसको नन्हा-मुन्ना बच्चा बना देते हैं, छछिया भर छाछ पर नचा देते हैं। 'हाय सीते !... हाय लखन !...' करके रोने की लीला करवा देते हैं। उसे हँसता, खेलता, रोता, गाता, नाचता, गौ चराता बना देते हैं। वे परात्पर ब्रह्म को बच्चा कैसे बना देते हैं ? उसको सखा कैसे बना देते हैं ? रथ को चलानेवाला कैसे बना देते हैं ? जो परात्पर ब्रह्म है वह अर्जुन का रथ चला रहा है ! जो कंस के कारागार में चतुर्भुज रूप में प्रकट होता है और देवकी व वसुदेव बोलते हैं कि आपने तो बालक होकर आने का वचन दिया था महाराज ! इस रूप में हम आपको लाड़-प्यार कैसे करेंगे ? हमें पुत्र-स्नेह कैसे मिलेगा ? तब देखते-देखते वह 'ऊँवाँ... ऊँवाँ... ऊँवाँ...' करता हुआ शिशु बन जाता है। हिन्दुस्तानियों के पास यह कौन-सा मेथड है ? व्हाट इज इट ? विदेशी दार्शनिकों के दिल में यह गुत्थी बड़ी गहरी है। हिन्दुस्तानियों का तत्त्वज्ञान, शास्त्र, उपनिषद्, वेद-बेद... ऑल इज ओ.के., ठीक है, हम समझ लेते हैं बुद्धिपूर्वक, लेकिन यह उनके पास क्या है कि परमात्मा उनके यहाँ प्रकट हो जाता है। वह उनके साथ नाचता है, उनके हाथ का खाता है, उनके साथ मिल-जुल के गायें चराता है। यह क्या मेथड है ?

बताओ हिन्दुस्तानी !

अयोध्या का राज्य करते-करते स्वधाम-गमन का समय होता है तो भगवान रामजी जाने की लीला करते हैं और बोलते हैं : 'जिसको चलना है चलो।' सब सरयू में प्रवेश करते हैं। हजारों-लाखों अयोध्यावासी सरयू में प्रविष्ट होते हैं और फिर साकेत धाम में पहुँच जाते हैं। यह कौन-सा मेथड होगा ? विदेशी चिंतक सिर खुजलाते रह जाते हैं।

भगवान श्रीकृष्ण कभी द्विभुजी हो जाते हैं, कभी चतुर्भुजी हो जाते हैं और अर्जुन को विश्वरूप का दर्शन करा देते हैं। छछिया भर छाछ पर नाच लेते हैं। राक्षसों आदि का कल्याण भी कर देते हैं, पूतना का विषपान भी कर लेते हैं और उसको स्वधाम भेज देते हैं। तो वे परात्पर परब्रह्म सारी सृष्टि का आधार सत्-चित्-आनंद हैं और बालक हो जाते हैं। किसीका मान बढ़ाने के लिए विश्व का स्वामी रण छोड़ के भागने को भी तैयार हो जाता है। वह यज्ञ में साधु-संतों की आवभगत करके उनके चरण धोता है, उनकी जूठी पत्तलें उठाता है। यह कौन-सी शक्ति है ? हिन्दुस्तानियों के पास यह कौन-सा मेथड है कि भगवान को साकार बना देते हैं ? अपने

साथ बातचीत करनेवाला, अपनेको छूनेवाला, बोलनेवाला, खानेवाला, लेनेवाला, अरे ! अपना चेला भी बना देते हैं ।

सांदीपनि कोई तेज-तर्रार विद्यार्थी नहीं थे लेकिन **ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः...** एकटक देखते हुए गुरुजी को सुनते और आध्यात्मिक दृष्टि से गुरुतत्त्व को देखते थे । गुरुजी संसार से जाते-जाते बोले : ''बेटा ! ऐहिक विद्या में तो तू ठीक-ठीक रहा लेकिन परम विद्या में तेरी रुचि रही । मैं तुझे आशीर्वाद देता हूँ कि जो निर्गुण, निराकार, सच्चिदानंद प्रेमाभक्ति और 'गीता' के ज्ञान का विस्तार करेगा वह भगवान श्रीकृष्ण तेरा चेला बनेगा ।''

तो अपने चेले को भगवान का गुरु बना दिया अर्थात् भगवान के दादागुरु बन जाते हैं ! यह कौन-सा मेथड है ?

'पार्लमेंट ऑफ वर्ल्ड रीलिजियन्स' में यह सवाल मुझसे पूछा गया था कि ''इंडिया में भगवान के अवतार क्यों होते हैं ?''

मैंने पूछा : ''जहाँ बारिश होती है वहाँ वृक्ष क्यों होते हैं और जहाँ वृक्ष होते हैं वहाँ बारिश क्यों होती है ?''

बोले : ''यह कुदरत का नियम है ।''

मैंने कहा : ''ऐसे ही भगवान शिवजी का कैलास जल से प्रकट हुआ और फिर शिवजी ने मत्स्येन्द्रनाथजी और अन्य संतों को आत्मप्रसाद का प्रसार करने के लिए नियुक्त किया। तो जहाँ भक्त होते हैं वहाँ भगवान आ जाते हैं और जहाँ भगवान होते हैं वहाँ भक्त आ जाते हैं । जहाँ हरियाली होती है वहाँ बरसात होती है और जहाँ बरसात होती रहती है वहाँ हरियाली होती है ।''

यह मेथड-बेथड कुछ नहीं है । यहाँ की भूमि पर भगवद्अवतार हुए शिवजी की परम्परा से, भगवान नारायण और ऋषियों की परम्परा से। यहाँ नश्वर शरीर की आसक्ति कम करके भाव और प्रेम विकसित हो ऐसी उपासना और साधना पद्धति है । तो जहाँ भाव और प्रेम होता है वहाँ महाराज ! पशु भी वश हो जाते हैं, पक्षी भी वश हो जाते हैं, मनुष्य भी वश हो जाते हैं और पत्थर भी पिघल जाते हैं तथा पत्थर से देव भी प्रकट हो जाते हैं । भक्तों की भावना और प्रेम से विश्वनियंता भी नन्हा-मुन्ना बालक होकर लीला करने को तैयार हो जाता है । मेथड-बेथड कुछ नहीं है ।

हिन्दू धर्म की विशेषता है कि उसकी मंत्रशक्ति, उपासना की पद्धति अपने में महान विशेषताएँ सँजोये हुए है । कई प्रकार के योग - लययोग, कुंडलिनी योग, नादानुसंधान योग, ज्ञानयोग, ध्यानयोग, टंक विद्या, आत्मविद्या, कर्मविद्या, भगवद्विद्या... अब कहाँ तक विस्तार करें ? इस हिन्दू धर्म की महिमा अपरंपार है ! हिन्दू धर्म की पद्धति से साधन-भजन करे तो मनुष्य में छुपी अलौकिक शक्तियाँ विकसित होती हैं । अभी तो केवल लाखवाँ हिस्सा विकसित हुआ है। आइन्स्टाईन ने भारतीय पद्धति-अनुसार ही इन्द्रिय-संयम और ध्यानयोग का आश्रय लिया था ।

भगवान व्यापक है । जब चाहे, जहाँ चाहे, जैसे चाहे अपने प्रेमी भक्त के, भावुक भक्त के आगे अपनी लीला करने के लिए, प्रेरणा देने के लिए प्रकट हो सकता है । भगवान के अवतार अर्थात् केवल कृष्ण अवतार हुआ, राम अवतार हुआ ऐसा मत समझो; भगवान के नित्य, नैमित्तिक, प्रेरणा, आवेश और प्रवेश अवतार होते रहते हैं । जैसे जब दुःशासन द्रौपदी का वस्त्र खींचने लगा तब द्रौपदी खूब विह्वल हो गयी और उसने भगवान को पुकारा : 'द्वारिकाधीश !' 'द्वारिका' बोली तब तक तो भगवान द्वारिका में

थे और 'धीश' बोली तो उनका साड़ी में प्रवेश अवतार हुआ। हाथियों का बल रखनेवाला दुःशासन साड़ी खींचते-खींचते थक गया। बोला : 'नारी है कि साड़ी है !' नहीं, तेरा बाप प्रवेश अवतार है ! ऐसे ही प्रह्लाद को सताया गया और भगवान नरसिंह का आवेश अवतार हुआ। बढ़िया काम करते हैं तो अंतर्यामी प्रभु आपको प्रेरणा देते हैं कि यह उचित है, यह अनुचित है। यह करो, यह न करो। यह प्रेरणा अवतार है।

भारतीय संस्कृति में गीता, गाय, तुलसी, पीपल, भगवन्नाम और बीजमंत्र संयुक्त ऋषि-मुनियों की ऐसी-ऐसी साधना की सीख है कि वह भले वहाँ के विद्वानों की समझ में नहीं आती, लेकिन शबरी भीलन के जीवन में स्वाभाविक राम की प्यास है तो वह रामजी को जूठे बेर खिलाने में सफल हो जाती है। मीराबाई कोई मेथड-बेथड नहीं जानती लेकिन मीरा की प्रेमाभक्ति ठाकुरजी को प्रकट कर देती है। 'हूँ तो तुर्कानी लेकिन हिन्द्वानी कहलाऊँगी...' कहनेवाली ताज श्रीकृष्ण को प्रकट कर लेती है। रहीम खानखाना भक्ति में ऐसे तल्लीन होते हैं कि श्रीकृष्ण बालक रूप में आते हैं और फिर प्रकट होकर मुरलीधर रूप में भी दर्शन देते हैं। ऐसे ही रविदासजी कोई नया मेथड नहीं जानते थे लेकिन जिसमें वे चमड़ा भिगोते थे, उनकी उस कठौती का पानी भी कितना दिव्य प्रभाव रखता था !

एक बार गोरखनाथजी उनके पास आये और बोले : ''अलख निरंजन ! प्यास बुझानी है, फकीर को पानी दे दो।''

रविदासजी ने उस कठौती से पानी दे दिया। गोरखनाथजी हिचकिचाये कि यह चमड़ेवाला पानी अशुद्ध तो है लेकिन रविदासजी जैसे संत का दिया हुआ है। न गिराया न पीया, आखिर संत कबीरजी को आकर कह दिया। कबीरजी की बेटी कमाली बैठी थी। वह बोली : ''महाराज ! मुझे दे दीजिये।'' कमाली वह पानी पी गयी और उसकी दिव्य शक्ति जागृत हो गयी। उसका विवाह मुलतान में हो गया और वह ससुराल चली गयी। उसके जीवन में चमत्कार होने लगे तो गोरखनाथजी नतमस्तक हो गये। फिर आये रविदासजी के पास तो रविदासजी बोले : ''वह पानी तो मुलतान गया।''

तात्पर्य, कोई बड़ा मेथड-बेथड नहीं है। आप प्रेम किये बिना नहीं रह सकते लेकिन जब नश्वर चीजों को प्रेम करते हैं तो मोह हो जाता है और शाश्वत परमात्मा को प्रेम करते हैं तो वह प्रेम परमात्मा हो जाता है।

जहाँ अपनत्व होता है वहाँ प्रेम होता है। कुत्ता कई जूते-चप्पलों पर पिचकारी लगाता है, कोई फर्क नहीं पड़ता लेकिन अपने जूते-चप्पल पर लगाने लगे तो उसे भगा देते हैं क्योंकि जूता अपना है। अपना है तो प्यारा हो गया। ऐसे ही भारतवासी बोलते हैं : 'भगवान मेरे हैं, भगवान गोविंद हैं, भगवान गोपाल हैं, भगवान अच्युत हैं, भगवान दामोदर हैं, माता की गहराई में मेरे प्रभु, पिता की गहराई में प्रभु... **त्वमेव माता च पिता त्वमेव...**' इस प्रकार की प्रेमाभक्ति और दृढ़ भावना ही निराकार ब्रह्म को साकार, नाचने-खेलने और हँसने-रोने वाला बना देती है। **अहं भक्त पराधीनो...** भक्तिभाव से भगवान भक्त के अधीन हो जाता है। जैसे बच्चे के प्रेम से माँ-बाप, दादा-दादी, पड़ोसी - सभी वश हो जाते हैं।

प्रेम न खेतों उपजे, प्रेम न हाट बिकाय।
राजा चहो प्रजा चहो, अहं दिये ले जाय ॥

भगवान के आगे दण्डवत् प्रणाम करते हैं अहं मिटाने के लिए। (शेष पृष्ठ १४ पर)

विश्वगुरु भारत

– पाश्चात्य विद्वान मैक्समूलर

मैं आप सबको विश्वास दिलाता हूँ कि भारत जैसा कर्मक्षेत्र न तो यूनान ही है और न इटली ही, न तो मिश्र के पिरामिड ही इतने ज्ञानदायक हैं और न बेबीलोन के राजप्रासाद ही। यदि हम सच्चे सत्यान्वेषी हैं, यदि हममें ज्ञानप्राप्ति की भावना है और यदि हम ज्ञान का सच्चा मूल्यांकन करना जानते हैं तो हमें इस तथ्य को मानना ही पड़ेगा कि सहस्राब्दियों से पीड़ित-प्रताड़ित एवं जंजीरों में जकड़े हुए भारत में ही हमारा गुरु बनने की पूर्ण क्षमता है; आवश्यकता है केवल सच्चे हृदय से उस क्षमता को पहचानने की।

यदि हमें इस समस्त धरा पर किसी ऐसे देश की खोज करनी हो, जहाँ प्रकृति ने धन, शक्ति और सौंदर्य का दान मुक्तहस्ता होकर किया हो या दूसरे शब्दों में जिसे प्रकृति ने बनाया ही इसलिए हो कि उसे देखकर स्वर्ग की कल्पना साकार की जा सके तो मैं बिना किसी प्रकार के संशय या हिचकिचाहट के भारत का नाम लूँगा। यदि मुझसे पूछा जाय कि किस देश के मानव-मस्तिष्क ने अपने कुछ सर्वोत्तम गुणों को सर्वाधिक विकसित स्वरूप प्रदान करने में सफलता प्राप्त की है, जहाँ के विचारकों ने जीवन के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण प्रश्नों एवं समस्याओं का सर्वाधिक सुंदर समाधान खोज निकाला है तथा इसी कारण वह इस योग्य हो गया है कि कान्ट और प्लाटो के अध्ययन में पूर्णता को पहुँचे हुए व्यक्ति को भी आकर्षित करने की शक्ति रखता है तो मैं बिना किसी विशेष सोच-विचार के भारत की ओर उँगली उठा दूँगा। यदि मैं स्वयं अपने से ही यह पूछना आवश्यक समझूँ कि जिन लोगों का समूचा पालन-पोषण (शारीरिक व मानसिक) यूनानियों एवं रोमनों की विचारधारा के अनुसार हुआ और अब भी हो रहा है तथा जिन्होंने सेमेटिक जातीय यहूदियों से भी बहुत कुछ सीखा है, ऐसे यूरोपीय जनों को यदि आंतरिक जीवन को सम्पूर्णता प्रदान करनेवाली सामग्री की खोज करनी हो, यदि उन्हें अपने जीवन को सच्चे रूप में मानव - जीवन बनानेवाली तथा ब्रह्मांडबंधुत्व (ध्यान रखिये कि मैं केवल विश्वबंधुत्व की बात नहीं कह रहा हूँ) की भावना को साकार बना सकने में समर्थ सामग्री की खोज करनी हो तो किस देश के साहित्य का सहारा लेना चाहिए ? तो एक बार फिर मैं भारत की ही ओर इंगित करूँगा, जिसने न केवल इस जीवन को ही सच्चा मानवीय जीवन बनाने का सूत्र खोज निकाला है वरन् परवर्ती जीवन किंबहुना शाश्वत जीवन को भी सुखमय बनाने का सूत्र पा लेने में सफलता प्राप्त कर ली है।

जिन्होंने भारतीयों के प्रति छिः-छिः का भाव दर्शाकर तथा यह कहकर आत्मसंतोष प्राप्त कर लिया है कि 'भारत में अब कुछ देखने, सुनने, जानने योग्य बाकी नहीं रह गया है', वे मेरी यह बात सुनकर आश्चर्य से स्तब्ध हुए बिना न रह सकेंगे कि जिनको वे लोग 'नेटिव' (आदिम) कहकर अपनी घृणा प्रदर्शित करते रहे हैं, उनमें इतनी अर्हता (विशिष्टता) है कि वे यूरोपियनों के गुरु हो सकते हैं। उनको आश्चर्याभिभूत हो जाना पड़ेगा जब वे यह सुनेंगे कि जिन देहाती भारतीयों को वे बाजारों तथा न्यायालयों में नित्यप्रति देखा करते थे, उनके भी जीवन से हमारे यूरोपीय बंधु बहुत कुछ सीख सकते हैं। ☐

समस्याएँ विकास का साधन हैं

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

ज्ञान का और जीवन का नजरिया ऊँचा होने से आदमी सभी समस्याओं को पैरों तले कुचलते हुए ऊपर उठ जाता है । दुनिया में ऐसी कोई समस्या या मुसीबत नहीं है जो आपके विकास का साधन न बने । कोई भी समस्या, मुसीबत आपके विकास का साधन है यह पक्का कर लो । जिसके जीवन में मुसीबत, समस्या नहीं आती उसका विकास असंभव है लेकिन जब डर जाते हो और गलत निर्णय लेते हो तो समस्या आपको दबाती है । समस्या का समाधान तथा उसका सदुपयोग करके आप आगे बढ़ो और सुख, सफलता आये तो उसे **'बहुजनहिताय'** बाँटकर, उसकी आसक्ति और भोग से बचकर आप औदार्य सुख लो । **समस्याएँ बाहर से विष की तरह तकलीफ देनेवाली दिखती हैं लेकिन जो भी तकलीफें हैं वे भीतर से अपने में विकास का अमृत सँजोये हुए हैं ।** ऐसा कोई संत-महापुरुष अथवा सुप्रसिद्ध व्यक्ति नहीं हुआ, जिसके जीवन में समस्याएँ और विरोध न हुआ हो ।

भगवान राम के जीवन में देखो, भगवान श्रीकृष्ण के जीवन में देखो तो समस्याओं की लम्बी कतार... ! श्रीकृष्ण का जन्म होने के पहले ही उनके माँ-बाप को कारागृह में जाना पड़ा । श्रीकृष्ण के जन्मते ही वे पराये घर ले जाये गये । कितनी भारी समस्या है ! फिर छठे दिन पूतना जहर लेकर आयी । कुछ दिन बीते तो शकटासुर, धेनुकासुर, अघासुर, बकासुर मारने आ गये थे । १७ साल तक समस्याओं से जूझते-जूझते श्रीकृष्ण कितने मजबूत हो गये ! ऐसे ही रामजी के जीवन में १४ वर्ष का वनवास आदि कई समस्याएँ आयीं । समस्याओं से घबराना नहीं चाहिए, भागना नहीं चाहिए और अपनेको कोसना नहीं चाहिए कि 'मैं बड़ा अभागा हूँ ।' दुःख और समस्याएँ आती हैं आसक्ति और लापरवाही मिटाने के लिए ।

आपकी लापरवाही के कारण असफलता आयी है तो आप लापरवाही मिटाओ । आसक्ति के कारण या खान-पान के कारण अगर बीमारी की समस्या आयी तो वह आपके खान-पान में लापरवाही की परिचायक है । बीमारी की समस्या तब आती है जब आप स्वाद-लोलुपता में पड़कर चटोरापन करते हो अथवा रात को देर से खाते हो, अधिक खाते हो या कोई ऐसी विरुद्ध खुराक ले लेते हो जो आपको पचती नहीं, शरीर को अनुकूल नहीं पड़ती । ऐसे ही विफलता की समस्या तब आती है जब आप अपने उद्देश्य, अपनी योग्यता और अपनी शक्ति का विचार किये बिना कोई काम करते हो । अपनी रुचि, अपनी योग्यता और अपना साधन समझकर उद्देश्य की पूर्ति का निर्णय करना चाहिए, फिर उसमें लग जाना चाहिए । □

अक्षय फलदायक तिथियाँ

'स्कंद पुराण' के अनुसार माघ मास की अमावस्या (२६ जनवरी २००९) द्वापर युग का प्रारंभ दिन है तथा 'भविष्य पुराण' के अनुसार माघ मास की पूर्णिमा (९ फरवरी २००९) कलियुग का प्रारंभ दिन है । इन्हें 'युगादि तिथियाँ' कहते हैं । इन तिथियों में किया हुआ दान, होम, जप व ध्यान अक्षय फल देता है । अतः इन तिथियों का फायदा उठायें ।

अपनी डफली अपना राग

(परम पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

आत्मा के प्रमाद से जीव दुःख पाते हैं। आकाश में वन नहीं होता और चन्द्रमा के मंडल में ताप नहीं होता, वैसे ही आत्मा में देह या इन्द्रियाँ कभी नहीं हैं। सब जीव आत्मरूप हैं। वृक्ष में बीज का अस्तित्व छुपा हुआ है, ऐसे ही जीव में ईश्वर का और ईश्वर में जीव का अस्तित्व है फिर भी जीव दुःखी है, कारण कि जानता नहीं है। चित्त में आत्मा का अस्तित्व है और आत्मा में चित्त का, जैसे बीज में वृक्ष - वृक्ष में बीज। जैसे बालू से तेल नहीं निकल सकता, वन्ध्या स्त्री का बेटा संतति पैदा नहीं कर सकता, आकाश को कोई बगल में बाँध नहीं सकता, ऐसे ही आत्मा के ज्ञान के सिवाय सारे बंधनों से कोई नहीं छूट सकता। आत्मा का ज्ञान हो जाय, उसमें टिक जाय तो फिर व्यवहार करे चाहे समाधि में रहे, उपदेश करे चाहे मौन रहे, अपने आत्मा में वह मस्त है। फिर राज्य भी कर सकते हैं और विश्रांति भी कर सकते हैं।

रात्रि को एक हॉल में दस आदमी सो रहे हैं। जिसको जैसा-जैसा सपना आता है उसको उस वक्त वैसा-वैसा ही सच्चा लगता है। जाग्रत में भी जैसी जिसकी कल्पना होती है उसको वैसा ही सच्चा लगता है।

कुछ लोग जंगल में घूमने गये। तीतर पक्षी बोल रहा था। जो सब्जी मंडी में धंधा करता था, उससे पूछा कि ''तीतर क्या बोलता है ?''

वह बोला : ''धड़ाधड़-धड़ाधड़-धड़ाधड़...''

पहलवान बोला : ''नहीं-नहीं, यह बोलता है - दंड-बैठक, दंड-बैठक, दंड-बैठक...''

तीसरा जो भक्त था, बोला : ''यह बोलता है - सीताराम-सीताराम-सीताराम, राधेश्याम...''

चौथा जो तत्त्वज्ञ था, बोला : ''अरे नहीं, यह बोलता है - एक में सब, सब में एक। तू ही तू, तू ही तू...''

जैसी अपनी-अपनी कल्पना थोप दी, वैसा दिखने लगा। ऐसे ही इस जगत में अपने-अपने फुरने पैदा होते हैं, वैसे-वैसे विचारों में जीव घटीयंत्र (अरहट) की नाईं भटकता रहता है। इस फुरने को मोड़कर जहाँ से फुरना उठता है उस परमात्मा में शांति पा ले अथवा फुरने को फुरना समझकर उसका साक्षी हो जाय तो मंगल हो जाय, कल्याण हो जाय ! ❑

(पृष्ठ ११ से 'यह कौन-सा मेथड है ?' का शेष)

नहीं तो भगवान को क्या जरूरत है कि हम लम्बे पड़ें ? ज्यों-ज्यों अहं गलता है और भगवान की महत्ता व अपने शरीर की नश्वरता समझ में आती है तथा भगवान की करुणा-कृपा स्वीकार होने लगती है, त्यों-त्यों भगवान का सद्भाव, भगवान का प्रेम, भगवान का आश्रय प्रकट होने लगता है।

चित्त जितना शांत रहता है और भगवान को अपना मानता है, उतनी ही चित्त में प्रेम, भाव और भगवत्सत्ता की सघनता होती है। उस प्रेम और भाव के बल से परात्पर परब्रह्म लीला करने को अवतरित हो जाता है; दूसरा कोई मेथड-बेथड नहीं है। ❑

सृष्टि कैसे बनी ?

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

सृष्टि के विषय में विचार करते-करते बहुत उच्चकोटि के महापुरुषों ने तीन विकल्प खोजे।

पहला विकल्प था 'आरम्भवाद'। इसके अनुसार जैसे कुम्हार ने घड़ा बना दिया, सेठ ने कारखाना बना दिया, आरम्भ कर दिया, ऐसे ही ईश्वर ने दुनिया चलायी। कुम्हार का बनाया हुआ घड़ा कुम्हार से अलग होता है, सेठ का कारखाना उससे अलग होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि ईश्वर की बनायी हुई दुनिया उससे अलग है। लेकिन दुनिया में तो ईश्वर की चेतना दिखती है। तो दुनिया और ईश्वर अलग-अलग कहाँ रहे ?

दूसरा विकल्प खोजा 'परिणामवाद' अर्थात् जैसे दूध में से दही बनता है ऐसे ईश्वर ही दुनिया बन गये। दूध में से दही बन गया तो फिर वापस दूध नहीं बनता, ऐसे ही ईश्वर ही सारी दुनिया बन गये तो सृष्टि की नियामक ईश्वरीय सत्ता कहाँ रही ? ईश्वर बनते-बिगड़ते हैं तो ईश्वर का ईश्वरत्व एकरस कहाँ रहा ?

खोजते-खोजते वेदांत को जाननेवाले तत्त्ववेत्ता महापुरुष आखिर इस बात पर सहमत हुए कि यह सृष्टि ईश्वर का विवर्त है। 'विवर्तवाद' अर्थात् अपनी सत्ता ज्यों-की-त्यों रहे और उसमें यह सृष्टि प्रतीत होती रहे। जैसे तुम्हारा आत्मा ज्यों-का-त्यों रहता है और रात को उसमें सपना प्रतीत होता है - लोहे की रेलगाड़ी, उसकी पटरियाँ और घूमनेवाले पहिये आदि।

तुम चेतन हो और जड़ पहिये बना देते हो, रेलगाड़ी बना देते हो, खेत-खलिहान बना देते हो। रेलवे स्टेशनों का माहौल बना देते हो। सपने में 'अजमेर का मीठा दूध पी ले भाई !... आबू की रबड़ी खा ले... मुंबई का हलुवा... नडियाद के पकौड़े खा ले...' - सारे हॉकर, पैसेंजर और टी.टी. भी तुम बना लेते हो। तुम हरिद्वार पहुँच जाते हो। 'गंगे हर' करके गोता मारते हो। फिर सोचते हो जेब में घड़ी भी पड़ी है, पैसे भी पड़े हैं। घड़ी और पैसे की भावना तो अंदर है और घड़ी व पैसे बाहर पड़े हैं। पुण्य प्राप्त होगा यह भावना अंदर है और गोता मारते हैं यह बाहर है। तो सपने में भी अंदर और बाहर होता है। तुम्हारे आत्मा के विवर्त में अंदर भी, बाहर भी बनता है, जड़ और चेतन भी बनता है फिर भी आत्मा ज्यों-का-त्यों रहता है।

ऐसे ही यह जगत परब्रह्म परमात्मा का विवर्त है। इसमें अंदर-बाहर, स्वर्ग-नरक, अपना-पराया सब दिखते हुए भी तत्त्व में देखो तो ज्यों-का-त्यों ! जैसे समुद्र की गहराई में शांत जल है और ऊपर से कई मटमैली तरंगें, कई बुलबुले, कई भँवर और किनारे के अलग-अलग रूप-रंग दिखते हैं। उदधि की गहराई में पानी ज्यों-का-त्यों है, ऊपर दिखनेवाली तरंगें विवर्त हैं। जैसे सागर में सागर के ही पानी से बने हुए बर्फ के टुकडे डूबते-उतराते हैं, ऐसे परब्रह्म परमात्मा ज्यों-का-त्यों है और यह जगत उसमें लहरा रहा है। इस प्रकार वेदांत-दर्शन का यह 'विवर्तवाद' सर्वोपरि एवं अकाट्य है। ❑

कर्मफल अवश्य ही भोगना पड़ता है

देवर्षि नारदजी ने श्री सनकजी से कहा : ''भगवन् ! मेरे मन में एक संदेह पैदा हो गया है। आपने कहा है कि जो लोग पुण्यकर्म करते हैं, उन्हें कोटि सहस्र कल्पों तक उनका महान भोग प्राप्त होता रहता है। दूसरी ओर यह भी आपने बताया है कि प्राकृत प्रलय में सम्पूर्ण लोकों का नाश हो जाता है और एकमात्र भगवान विष्णु ही शेष रह जाते हैं। अतः मुझे यह संशय हुआ है कि क्या प्रलयकाल तक जीव के पुण्य और पापभोग की समाप्ति नहीं होती ? आप इस संदेह का निवारण करने योग्य हैं।''

श्री सनकजी बोले : ''महाप्राज्ञ ! भगवान नारायण अविनाशी, अनंत, परम प्रकाशस्वरूप और सनातन पुरुष हैं। वे विशुद्ध, निर्गुण, नित्य और माया-मोह से रहित हैं। परमानंदस्वरूप श्रीहरि निर्गुण होते हुए भी सगुण-से प्रतीत होते हैं। ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि रूपों में व्यक्त होकर भेदवान-से दिखायी देते हैं। वे ही माया के संयोग से सम्पूर्ण जगत का कार्य करते हैं। वे ही श्रीहरि ब्रह्माजी के रूप से सृष्टि तथा विष्णुरूप से जगत का पालन करते हैं और अंत में भगवान रुद्र के रूप से वे ही सबको अपना ग्रास बनाते हैं। यह निश्चित सत्य है। प्रलयकाल व्यतीत होने पर भगवान जनार्दन ने शेषशय्या से उठकर ब्रह्माजी के रूप से सम्पूर्ण चराचर विश्व की पूर्वकल्पों के अनुसार सृष्टि की है। विप्रवर ! पूर्वकल्पों में जो-जो स्थावर-जंगम जीव जहाँ-जहाँ स्थित थे, नूतन कल्प में ब्रह्माजी उस सम्पूर्ण जगत की पूर्ववत् सृष्टि कर देते हैं। अतः साधुशिरोमणे ! किये हुए पापों और पुण्यों का अक्षय फल अवश्य भोगना पड़ता है (प्रलय हो जाने पर जीव के जिन कर्मों का फल शेष रह जाता है, दूसरे कल्प में नयी सृष्टि होने पर वह जीव पुनः अपने पुरातन कर्मों का भोग भोगता है।) कोई भी कर्म सौ करोड़ कल्पों में भी बिना भोगे नष्ट नहीं होता। अपने किये हुए शुभ और अशुभ कर्मों का फल अवश्य ही भोगना पड़ता है।''

नाभुक्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटिशतैरपि ।
अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम् ॥

(नारद पुराण, पूर्व भाग : ३१.६९-७०)

पूज्य बापूजी कहते हैं :

चाहे कोई देखे या न देखे फिर भी कोई है जो हर समय देख रहा है, जिसके पास हमारे पाप-पुण्य सभी कर्मों का लेखा-जोखा है। इस दुनिया की सरकार से शायद कोई बच भी जाय पर उस सरकार से आज तक न कोई बचा है और न बच पायेगा। किसी प्रकार की सिफारिश अथवा रिश्वत वहाँ काम नहीं आयेगी। उससे बचने का कोई मार्ग नहीं है। कर्म करने में तो मानव स्वतंत्र है किंतु फल भोगने में कदापि नहीं, इसलिए हमेशा अशुभ कर्मों का त्याग करके शुभ कर्म करने चाहिए।

जो कर्म स्वयं को और दूसरों को भी सुख-शांति दें तथा देर-सवेर भगवान तक पहुँचा दें, वे शुभ कर्म हैं और जो क्षण भर के लिए ही (अस्थायी) सुख दें तथा भविष्य में अपनेको व दूसरों को भगवान से दूर कर दें, कष्ट दें, नरकों में पहुँचा दें उन्हें अशुभ कर्म कहते हैं।

किये हुए शुभ या अशुभ कर्म कई जन्मों तक मनुष्य का पीछा नहीं छोड़ते। पूर्वजन्मों के कर्मों के जैसे संस्कार होते हैं, वैसा फल भोगना पड़ता है। **(शेष पृष्ठ १९ पर)**

प्रणाम विनय का सूचक है

प्रत्यहं प्रत्यवेक्षेत् नरश्चरितमात्मनः ।

'मनुष्य को प्रतिदिन अपने आचरण का अवलोकन करते रहना चाहिए ।'

स्वामी अखण्डानंदजी सरस्वती प्रायः श्री उड़िया बाबाजी, श्री शास्त्रानंदजी, श्री हरि बाबाजी, श्री आनंदमयी माँ आदि भारतवर्ष के प्रसिद्ध सिद्ध महापुरुषों को प्रणाम करते थे ।

दंड-ग्रहण के समय उन्हें कहा गया कि 'सबको प्रणाम नहीं करना चाहिए ।' जिससे अखण्डानंदजी के मन में बड़ी दुविधा उत्पन्न हो गयी । इस पर उन्होंने श्री उड़िया बाबाजी महाराज से पूछा, तब उन्होंने समझाते हुए कहा : ''दीक्षा या उपदेश ग्रहण करना हो तब तो ब्राह्मण (जो ब्रह्म में रमा हुआ) हो इसका ध्यान रखना चाहिए परंतु प्रणाम करना हो तब तो सबको करना चाहिए । प्रणाम भगवद्बुद्धि से करना चाहिए, मनुष्यबुद्धि से नहीं । प्रणाम तो विनय का सूचक है, एक सद्गुण है । तुम जिन महात्माओं को पहले प्रणाम करते रहे हो, उनको बिना विचार किये ही प्रणाम किया करो ।''

बाबा का यह उपदेश अखण्डानंदजी ने धारण कर लिया और उन्हें फिर कभी किसीको प्रणाम करने में हिचक न हुई ।

मनु महाराज ने 'मनुस्मृति' में कहा है :

ऊर्ध्वं प्राणा ह्युत्क्रामन्ति यूनः स्थविर आयति ।
प्रत्युत्थानाभिवादाभ्यां पुनस्तान्प्रतिपद्यते ॥
अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः ।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलम् ॥

'बड़ों के आने पर छोटे के प्राण ऊपर चढ़ते हैं और जब वह उठकर प्रणाम करता है तो पुनः प्राणों को पूर्ववत् स्थिति में प्राप्त कर लेता है । जो पुरुष नित्य बड़ों को, वृद्धजनों-गुरुजनों को प्रणाम करता है और उनकी सेवा करता है उसकी आयु, विद्या, यश और बल - ये चारों बढ़ते हैं ।'

(२.१२०-१२१)

अतः हमारे कर्म व व्यवहार ऐसे हों कि बड़ों के हृदय से हमारे लिए आशीर्वाद निकलें, हमारे व्यवहार के कारण किसीके हृदय को ठेस न पहुँचे । इसीमें हमारा मंगल छुपा है । मूर्ति को प्रणाम करने से भी लाभ होता है तो जिनमें जाग्रत देव बैठा है उनको प्रणाम करने में अहं आड़े क्यों आये ? संत तुलसीदासजी भी इस बात की पुष्टि करते हैं :

सीय राममय सब जग जानी ।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी ॥

वो सर सर नहीं जो हर दर पे झुकता रहे ।
वो दर दर नहीं जहाँ सज्जनों का सर न झुके ॥ □

सामर्थ्य की कुंजी तुम्हारे पास ही है । अपने मन को मजबूत बना लो तो तुम पूर्णरूपेण मजबूत हो । हिम्मत, दृढ़ संकल्प और प्रबल पुरुषार्थ से ऐसा कोई ध्येय नहीं, जो सिद्ध न हो सके । बाधाएँ पैरों तले कुचलने की चीज है । प्रेम और आनंद दिल से छलकाने की चीज है । हे प्रेमस्वरूप ! हे आनंदस्वरूप ! हे सुखस्वरूप मानव ! सुख, प्रेम और आनंद के लिए अपनेको बाहर भटका रहा है, खपा रहा है, तपा रहा है ! ठहर... रुक जा । अपने-आपमें देख, तू कितना मधुर है... पवित्र है... प्यारा है !

(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'सामर्थ्य स्रोत' से)

संस्कारों का खेल

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

जीवन में सावधानी नहीं है तो जिससे सुख मिलेगा उसके प्रति राग हो जायेगा और जिससे दुःख मिलेगा उसके प्रति द्वेष हो जायेगा। इससे अनजाने में ही चित्त में संस्कार जमा होते जायेंगे एवं वे ही संस्कार जन्म-मरण का कारण बन जायेंगे।

यहाँ सुख होगा ऐसी जब अंतःकरण में संस्कार की धारा चलती है तो ज्ञान तुमको उस कार्य में प्रवृत्त करता है। यहाँ दुःख होगा ऐसी धारा होती है तो वहाँ से तुम निवृत्त होते हो। ज्ञान ही प्रवर्तक है, ज्ञान ही निवर्तक है। वस्तु, व्यक्ति, परिस्थितियाँ ये सुख और दुःख के ऊपरी-ऊपरी साधन हैं लेकिन सुख-दुःख का मूल कहाँ है इसका अगर ज्ञान हो जाय तो तुम शुद्ध ज्ञान में पहुँच जाओगे। प्रवृत्ति व निवृत्ति का ज्ञान मूल में तो आता है चैतन्य से लेकिन तुम्हारे संस्कारों की भूलों से वह ज्ञान ले-ले के इधर-उधर भटक के तुम पूरा कर देते हो। अगर ज्ञानस्वरूप ईश्वर के मूल में जाने की कुछ बुद्धि सूझ जाय, भूख जग जाय तो सारे सुखों का मूल अपना आत्मदेव है-परमेश्वर। जब अपने ही घर में खुदाई है, काबा का सिजदा कौन करे ! काशी में कौन जाय !

दो व्यक्ति लड़ रहे हैं। क्यों लड़ रहे हैं ? एक को है कि 'यह मेरा कुछ ले जायेगा।' दूसरे को है कि 'छीन लो।' तो भय लड़ रहा है, लोभ लड़ रहा है लेकिन ज्ञान दोनों में है। ज्ञानस्वरूप चेतन तो है लेकिन भय के संस्कार और लोभ के संस्कार लड़ा रहे हैं। ऐसे ही राग के संस्कार और द्वेष के संस्कार भी लड़ा रहे हैं।

राक्षसों को रावण के प्रति राग है और हनुमानजी के प्रति द्वेष है तो वे रामजी के विरुद्ध लड़ाई करेंगे और हनुमानजी व बंदरों को रामजी के प्रति प्रेम है और राक्षसों के प्रति नाराजगी है तो वे राक्षसों से लड़ेंगे लेकिन लड़ने की सत्ता, ज्ञान तो वही-का-वही है। गीजर में तार गया तो पानी गरम होगा और फ्रिज में गया तो ठंडा लेकिन बिजली तत्त्व वही-का-वही। **सत्यं ज्ञानं अनन्तं ब्रह्म।** वह सत्स्वरूप, ज्ञानस्वरूप और अंत न होनेवाला है, मरने के बाद भी ज्ञानस्वरूप आत्मदेव का अंत नहीं होता।

किसीके कर्म सात्त्विक होते हैं तो उसके संस्कार वैसे होंगे। जैसे - तुम्हारे कर्म सात्त्विक हैं तो सत्संग में आने का संस्कार, ज्ञान तुम्हें यहाँ ले आया। अगर शराबी-कबाबी होता तो बोलता : 'रविवार का दिन है, चलो भाई ! शराबखाने में जायेंगे', पिक्चरबाज होता तो थिएटर में ले जाता। तो ज्ञान के आधार से संस्कार तुम्हें यहाँ-वहाँ ले जा रहे हैं।

तो कोई चीज बुरी और भली कैसे ? कि संस्कारों के अनुसार। मेरे सामने कोई तुलसी डाली हुई कुछ सात्त्विक चीज-वस्तु-प्रसाद ले आता है तो मैं कहता हूँ : 'चलो भाई ! थोड़ा रखो, थोड़ा ले जाओ' लेकिन यदि कोई मांस, मदिरा, अंडा आदि ले आयेगा तो मैं कहूँगा : 'ए... बेवकूफ है क्या ? यह क्या ले आया !' लेकिन वही चीज शराबी-कबाबी के पास ले जाओ तो बोलेगा : 'यार ! उस्ताद !! आज तो सुभान-अल्लाह है।' और मेरा प्रसाद ले जाओगे तो बोलेगा : ''अरे छोड़ ! बाबा लोगों की क्या बात करता है, यह आमलेट पड़ा है, मैं मौज मार रहा हूँ।''

तो उसके तामस, नीच संस्कार हैं तो उसका ज्ञान नीचा हो जाता है। यदि मध्यम संस्कार हैं तो उसका ज्ञान मध्यम हो जाता है और उत्तम संस्कार हैं तो उसका ज्ञान उत्तम हो जाता है। यदि भगवदीय संस्कार हैं तो उसका ज्ञान भगवन्मय हो जाता है और ब्रह्मज्ञान के संस्कार हैं तो उसका ज्ञान अपने मूल स्वभाव को जनाकर उसे मुक्तात्मा, महान आत्मा बना देता है, साक्षात्कार करा देता है।

जो कुछ परिवर्तन और प्राप्ति है वह मनुष्य-जीवन में ही है। जो किसी विघ्न-बाधा के आने पर सोचता है : 'यहाँ से चला जाऊँ, भाग जाऊँ...', वह आदमी अपने जीवन में कुछ नहीं कर सकता। वह कायर है कायर ! हतभागी है। **मन्दाः सुमन्दमतयाः।** वे ही हलके संस्कार अगर आगे आते हैं तो हलका प्रकाश होता है। जैसे बरसात तो वही-की-वही लेकिन कीचड़ में पड़ती है तो दलदल हो जाती है, सड़क पर पड़ती है तो डीजल और गोबर के दाग धोती है, खेत में पड़ती है तो धान हो जाता है और स्वाति नक्षत्र के दिनों में सीप में पड़ती है तो मोती हो जाती है। पानी तो वही-का-वही लेकिन संपर्क कैसा होता है ? जैसा संपर्क वैसा लाभ होता है। ऐसे ही ज्ञान तो वही-का-वही लेकिन संस्कार कैसे हैं ? संस्कार अगर दिव्य होते जायें तो ज्ञान की दिव्यता का फायदा मिलेगा। संस्कार दिव्य कहाँ से होते हैं ? दुनियादारी में तो दिव्य संस्कार आते ही नहीं हैं। राग, द्वेष, काम, क्रोध, लोभवाले ही संस्कार आते हैं। तो बोले : 'ध्यान-भजन करें।'

ध्यान-भजन दुनियादारी से तो अच्छा है, इससे बुद्धि तो अच्छी होती है लेकिन इससे भी ऊँची बात है सत्संग।

तन सुखाय पिंजर कियो, धरे रैन दिन ध्यान।

ध्यान अच्छा तो है, दिन-रात कोई ध्यान कर ले लेकिन -

तुलसी मिटे न वासना, बिना विचारे ज्ञान ॥

वासना इधर-उधर भटकाती है। एकाग्र होने के बाद भी संकल्प करके आदमी दिव्य लोकों में और दिव्य भोगों में उलझ सकता है, इसीलिए उसको सत्संग चाहिए और सत्संग से ज्ञान के दिव्य संस्कार जागृत होते हैं। इसलिए बोलते हैं :

तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग ॥

अर्थात् स्वर्ग और मोक्ष के सब सुखों को तराजू के एक पलड़े में रखा जाय तो भी वे सब मिलकर दूसरे पलड़े पर रखे हुए उस सुख के बराबर नहीं हो सकते, जो क्षणमात्र के सत्संग से मिलता है। **(श्रीरामचरित. सुं.कां. : ४)**

सो जानब सतसंग प्रभाऊ।
लोकहुँ बेद न आन उपाऊ ॥ ❐

(पृष्ठ १६ से 'कर्मफल अवश्य ही भोगना पड़ता है' का शेष)

गहना कर्मणो गतिः।

'कर्मों की गति बड़ी गहन होती है।' **(गीता : ४.१७)**

कर्म का फल तो भोगना ही पड़ता है; चाहे कोई इसी जन्म में भोगे, चाहे दो जन्मों के बाद भोगे, चाहे हजार जन्मों के बाद भोगे।

हजारों वर्षों तक नरकों में पड़ने के बजाय थोड़ा-सा ही पवित्र जीवन बिताना कितना हितकारी है !

मनुष्य-जन्म एक चौराहे के समान है। यहाँ से सारे रास्ते निकलते हैं। आप सत्कर्म करके देवत्व लाओ और स्वर्ग के अधिकारी बनो अथवा तो ऐसा कर्म करो कि यक्ष, किन्नर, गंधर्व बन जाओ, आपके हाथ की बात है। जप, ध्यान, भजन, संतों का संग आदि करके ब्रह्म का ज्ञान पाकर मुक्त हो जाओ, यह भी आपके ही हाथ की बात है। फिर कोई कर्मबंधन आपको बाँध नहीं सकेगा। **(पूज्य बापूजी के सत्संग से निर्मित पुस्तक 'कर्म का अकाट्य सिद्धांत' से)** ❐

जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

हजारों-हजारों के जीवन में मैंने देखा कि जिन्होंने संतों का कुप्रचार किया, उन्हें सताया या संत के दैवी कार्य में बाधा डाली, उनको फिर खूब-खूब दुःख सहना पड़ा, मुसीबतें झेलनी पड़ीं। जो संत के दैवी कार्य में लगे उनको खूब सहयोग मिला और उन्होंने बिगड़ी बाजियाँ जीत लीं। उनके बुझे दीये जल गये, सूखे बाग लहराने लगे। ऐसे तो हजारों-लाखों लोग होंगे।

'गुरुवाणी' में जो आया है, बिल्कुल सच्ची बात है :

संत का निंदकु महा हतिआरा ॥
संत का निंदकु परमेसुरि मारा ॥
संत का दोखी बिगड़ रूपु होइ जाइ ॥
संत के दोखी कउ दरगह मिलै सजाइ।
संत के दोखी की पुजै न आसा।
संत का दोखी उठि चलै निरासा॥
संत के दोखी कउ अवरु न राखनहारु।
नानक संत भावै ता लए उबारि।

अगर वह सुधर जाता है और संत की शरण आता है तो फिर संत उसका अपनी कृपा से उद्धार भी कर देते हैं।

किसीका सत्यानाश करना हो तो उसे संत की निंदा सुना दो, अपने-आप सत्यानाश हो जायेगा और किसीका बेड़ा पार करना हो तो संत के सत्संग में तथा संत के दैवी कार्य में लगा दो, अपने-आप उसका भविष्य उज्ज्वल हो जायेगा।

यह बात रामायणकार की दृष्टि से भी मिलती है :

जहाँ सुमति तहँ संपति नाना।

आप भगवन्नाम-सुमिरन करते हो, दुष्ट प्रवृत्ति से बचते हो तो आपकी मति सुमति हो जाती है, अनेक प्रकार की दैवी सम्पदा आपकी सुरक्षा करती है। आपके आस-पासवालों को भी फायदा हो जाता है। इस प्रकार जहाँ सुमति है वहाँ उस परमात्मदेव की सम्पदा रक्षा करती है।

जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना ॥

जो कुकर्म करते हैं, दूसरों की श्रद्धा तोड़ते हैं अथवा और कुछ गहरा कुकर्म करते हैं उन्हें महादुःख भोगना पड़ता है और यह जरूरी नहीं है कि किसीने आज श्रद्धा तोड़ी तो उसको आज ही फल मिले। आज मिले, महीने के बाद मिले, दस साल के बाद मिले... अरे ! कर्म के विधान में तो ऐसा है कि ५० साल के बाद भी फल मिल सकता है या बाद के किसी जन्म में भी मिल सकता है।

श्रद्धा से प्रेमरस पैदा होता है, श्रद्धा से सत्य की प्राप्ति होती है। कोई हमारा हाथ तोड़ दे तो इतना पापी नहीं है, किसीने हमारा पैर तोड़ दिया तो वह इतना पापी नहीं है, किसीने हमारा सिर फोड़ दिया तो वह इतना पापी नहीं है जितना वह पापी है जो हमारी श्रद्धा को तोड़ता है।

कबीरा निंदक ना मिलो पापी मिलो हजार।
एक निंदक के माथे पर लाख पापिन को भार ॥

जो भगवान की, हमारी साधना की अथवा गुरु की निंदा करके हमारी श्रद्धा तोड़ता है वह

भयंकर पातकी माना जाता है। उसकी बातों में नहीं आना चाहिए।

रविदासजी, दादू दीनदयालजी आदि संतों के लिए अफवाहें और कहानियाँ बनाकर निंदा करनेवाले लोग थे। स्वामी रामसुखदासजी के लिए निंदा करनेवाले लोग थे। ६० साल की उम्र में उस महासंत के बारे में कई प्रकार के हथकंडे अपनाकर ऐसा कुप्रचार किया गया, जिसको बोलने में हमारी वाणी अपवित्र होगी और सुनने से आपके कान अपवित्र होंगे। ऐसी गंदी-गंदी बातों का प्रचार किया कि उस महान संत को अन्न और जल छोड़ देना पड़ा।

निंदा करके लोगों की श्रद्धा तोड़नेवाले लोगों को तो जब कष्ट होगा तब होगा लेकिन जिसकी श्रद्धा टूटी उसका तो सर्वनाश हुआ। बेचारे की शांति गयी, प्रेमरस गया, सत्य का प्रकाश गया। गुरु से नाता जुड़ा और फिर पापी ने तोड़ दिया।

आजकल हिन्दू धर्म को नीचा दिखाने का षड्यंत्र हिन्दुस्तान में चल रहा है। हम क्यों अपने धर्म पर से श्रद्धा टूटने देंगे ? जिस धर्म में भगवान श्रीकृष्ण अवतरित हुए, श्रीराम अवतरित हुए, शिवजी प्रकट हुए; जिस धर्म में मीराबाई, संत कबीरजी, गुरु नानकजी जैसे महापुरुष प्रकट होते रहे; जिस धर्म में गंगाजी को प्रकट करनेवाले राजा भगीरथ हुए ऐसा धर्म हम क्यों छोड़ेंगे ?

गुरु तेगबहादुर बोलिया
सुनो सिखो बड़भागियाँ।
धड़ दीजिये धर्म न छोड़िये ॥
सिर दीजे सद्गुरु मिले
तो भी सस्ता जान।

सिर देकर भी हिन्दू धर्म का सच्चा ब्रह्मज्ञानी सद्गुरु मिले तो भी सौदा सस्ता है ! ❐

चिंतनिका

❋ परम पुरुषार्थ के मार्ग में कूद पड़ो। भूतकाल के लिए पश्चात्ताप और भविष्य की चिंता छोड़कर निकल पड़ो। परमात्मा के प्रति अनन्य भाव रखो। फिर देखो कि इस घोर कलियुग में भी तुम्हारे लिए अन्न, वस्त्र और निवास की कैसी व्यवस्था होती है !

❋ जिस साधना में तुम्हारी रुचि होगी उस साधना में ईश्वर मधुरता भर देंगे। तुम्हारी भावना, तुम्हारी निष्ठा पक्की होना महत्त्वपूर्ण है। तुम्हारे परम इष्टदेव तुम पर खुश हो जायें तो अनिष्ट तुम्हारा कुछ भी बिगाड़ नहीं सकते। परम इष्टदेव है तुम्हारा आत्मा, तुम्हारा निजस्वरूप। परमात्मा में तुम्हारी अनन्य भक्ति हो जाय तो परमात्मा तुम्हें कुछ देंगे नहीं, वे तुम्हें अपने में मिला लेंगे। अब बताओ, आपको कुछ देना शेष रहा क्या ?

❋ ईश्वर के सिवाय अन्य तमाम सुखों के इर्द-गिर्द व्यर्थता के काँटे लगे ही रहते हैं। जरा-सा सावधान होकर सोचोगे तो यह बात समझ में आ जायेगी और तुम ईश्वर के मार्ग पर चल पड़ोगे।

❋ लौकिक सरकार भी अपने सरकारी कर्मचारी की जिम्मेदारी सँभालती है। फिर ऊर्ध्वलोक की दिव्य सरकार, परम पालक परमात्मा अध्यात्म के पथिक का बोझ नहीं उठायेंगे क्या ?

❋ पर्व के दिन किया हुआ शुभ कार्य अधिक फलदायी होता है।

❋ ध्यान करते समय मन यदि स्थिर न होकर इधर-उधर भटकने लगे तो ध्यान करना छोड़कर मन को कहो : 'अच्छा बेटा ! जाओ... जहाँ तुम्हारी इच्छा हो वहीं जाओ। सब रूप तो भगवान ने ही धारण कर रखे हैं। जो भी वस्तुएँ दिखलायी देती हैं वे सब परमात्मा नारायण के ही रूप हैं।' सारे संसार में सबको भगवान का रूप समझकर मन-ही-मन भगवद्बुद्धि से सबको प्रणाम करो। एक परमात्मा ने ही अनन्त रूप धारण कर लिये हैं। बार-बार ऐसी भावना दृढ़ करते रहने से भी भगवद्दर्शन सुलभ हो जाता है। **(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'इष्टसिद्धि' से)**

बंधन और मुक्ति कर्म से

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

गुरुकृपा हि केवलं शिष्यस्य परं मंगलम् ।

गुरु की कृपा ही शिष्य का परम मंगल कर सकती है, दूसरा कोई नहीं कर सकता है यह प्रमाण वचन है । प्रमाण वचन को जो पकड़ता है वह तरता है । जो मन के अनुसार, वासना के अनुसार ही गुरु को देखना चाहता है वह भटक जाता है । 'गुरु को यह नहीं करना चाहिए, ऐसा नहीं करना चाहिए, ऐसा करना चाहिए... अथवा हमको ऐसा होना चाहिए, हमको यह मिलना चाहिए...'- ऐसी सोच है तो समझो वह 'वासना अनुसारी' है ।

'शास्त्रानुसारी' प्रमाण के अनुरूप करेगा । 'वासना अनुसारी' मन के अनुरूप करेगा । नामदान तो ले लेते हैं लेकिन मन के अनुरूपवाले ही लोग अधिक होते हैं । कोई विरला होता है प्रमाण से चलनेवाला - जो शास्त्र कहते हैं वह सत्, जो गुरुजी कहें वह सत्, जो अपनी वासना कहती है वह असत् ।

वासना अनुसारी कर्म बंधन है, संसार है, जन्म-मरण का कारण है और शास्त्रानुसारी कर्म उन्नति व ईश्वरप्राप्ति का साधन है । तो पुरुषार्थ क्या करना है ? जैसा मन में आये ऐसा पुरुषार्थ करना चाहिए कि जैसा शास्त्र और गुरु कहते हैं वैसा करना चाहिए ? मान्यता अनुसारी कर्म कितने भी कर लो और उनका फल कितना भी दिख जाय लेकिन होगा वह संसारी ।

जैसे सूर्य पृथ्वी से १३ लाख गुना बड़ा है - यह प्रमाणभूत बात है । आँखों को नहीं दिखता है फिर भी मानना पड़ेगा । आकाश में नीलिमा आँख को दिखती है लेकिन प्रमाणित है कि नीलिमा नहीं है तो मानना पड़ेगा नीलिमा नहीं है, हमारी आँख की कमजोरी से दिखती है । जो प्रमाणित बात है वह माननी पड़ती है । शास्त्र कहते हैं : **गुरुकृपा हि केवलं शिष्यस्य परं मंगलम् ।** यह प्रमाणित बात है । नानकजी कहते हैं : **घर विच आनंद रह्या भरपूर, मनमुख स्वाद न पाया ।** अपने घर में ही ब्रह्म परमात्मा का आनंद है लेकिन जो मन के अनुसार ही करना चाहते हैं, वे उसको नहीं पा सकते । यह प्रमाणित बात है ।

हमारे घर में कोई कमी नहीं थी । हमारे परिचय में गुफा की, रहने की जगहों की कमी नहीं थी फिर भी हमको अच्छा न लगे, ऐसा सात साल गुरुजी ने डीसा की झोपड़पट्टी में हमको रख दिया तो हमने स्वीकार कर लिया । हमारे मन की नहीं चली । हमारी वासना के अनुसार अथवा हमारे कुटुम्बी हमको कहते और हम चले जाते तो हमारी वही दशा होती जैसी दूसरे कर्मलेढ़ियों की होती है । कर्मलेढ़ी उसे कहा जाता है जिसके हाथ में मक्खन का पिण्ड आया और सरक गया, अब लस्सी चाट रहा है । करा-कराया सब नष्ट कर रहा हो उसको बोलते हैं कर्मलेढ़ी । अगर हम कर्मलेढ़ी हो जाते तो डीसा और अमदावाद में कितना अंतर है ? और हम तो शादीशुदा थे, ७ साल में सातों बार घर जाकर आ सकते थे बिना आज्ञा लिये... ७० बार जाते तो भी गुरुजी कहाँ रोकते ? लेकिन हमने देखा कि अपने मन में या कुटुम्बियों के मन में जो भी आयेगा वैसा करेंगे तो आखिर क्या मिलेगा ? वे जन्म-मरण से पार नहीं हुए हैं तो उनकी सलाह लेकर क्या हम जन्म-मरण से पार हो जायेंगे ?

शास्त्र कहता है :

तन सुखाय पिंजर कियो धरे रैन दिन ध्यान ।
तुलसी मिटे न वासना बिना विचारे ज्ञान ॥

शास्त्रानुसारी कर्म किये बिना ईश्वर मिलता तो यूँ तो सबको मिल जाय ईश्वर ! आस्तिक तो बहुत लोग हैं, श्रद्धालु तो बहुत लोग हैं, फिर उनको अल्लाह, गॉड या ईश्वर क्यों नहीं मिलता ? मेरे गुरुजी के आश्रम में ऐसे कई लोग आये । जैसे आई.ए.एस. होने के लिए ढाई लाख युवक परीक्षा देते हैं । विभिन्न परीक्षाएँ देते-देते कई छँट जाते हैं, कई पास होते हैं, अंत में उनमें से करीब १००० आई.ए.एस. अफसरों की पोस्टिंग होती है ऐसा हमने सुना है । ऐसे ही गुरु के द्वार पर कई लोग आते हैं परंतु उनमें से जिनमें ईश्वरप्राप्ति की सच्ची लगन होती है वे गुरु के दैवी कार्यों में, शास्त्रानुसारी कर्मों में तत्परता से लगे रहते हैं और परम लक्ष्य को पा लेते हैं ।

अपने मन में जैसा आया वैसा निर्णय करके जीव संसार-सागर में बह जाता है । अतः वासना अनुसारी कर्म संसार में भटकाता है और प्रमाण अनुसारी कर्म मोक्ष का हेतु है । अच्छा तो वही लगेगा जो अपने अनुकूल मिल जाय । व्यक्ति अपने विचारों के अनुसार करने लग जाय तो गिरेगा, पतन होगा और गुरु के अनुरूप छलाँग मारी तो उत्थान होगा । अपनी मान्यता के अनुसार एक जन्म नहीं हजार जन्म जीयो, कर-करके गिर जाते हैं इसीलिए बोलते हैं शास्त्र के अनुसार कर्म करो ।

रामकृष्णदेव ने अपनी मान्यता के अनुसार काली माता को तो प्रकट कर लिया लेकिन काली माता ने कहा : 'ब्रह्मज्ञानी गुरु की शरण जाओ ।'

नामदेवजी ने अपनी मान्यतानुसार भगवान विठ्ठल को प्रकट कर लिया लेकिन विठ्ठल ने कहा : 'विसोबा खेचर के पास जाओ ।' भगवान शिव को पार्वतीजी ने अपनी मान्यता के अनुसार पति के रूप में पा लिया लेकिन शिवजी ने कहा : 'गुरु वामदेवजी की शरण जाओ ।' यह क्या रहस्य है ? प्रमाणभूत है कि **गुरुकृपा हि केवलं...** प्रमाणभूत बात माननी पड़ेगी !

मेरी हो सो जल जाय, तेरी हो सो रह जाय ।

हमारी जो अहंता, ममता और वासना है वह जल जाय । गुरुजी ! आपकी जो करुणा और ज्ञानप्रसाद है वही रह जाय । तत्परता से सेवा करते हैं तो आदमी की वासनाएँ नियंत्रित हो जाती हैं और ईश्वरप्राप्ति की भूख लगती है ।

प्रमाणभूत है कि जगत नष्ट हो रहा है । संसार का कितना भी कुछ मिल जाय लेकिन परमात्म-पद को पाये बिना इस जीवात्मा का जन्म-मरण का दुःख जायेगा नहीं ।

बिनु रघुवीर पद जिय की जरनी न जाई ।

जो प्रमाणभूत बात है उसको पकड़ लेना चाहिए और जीवन सफल बनाना चाहिए । ❑

यदि आपमें अपने परम लक्ष्य को प्राप्त करने का दृढ़ संकल्प है तो प्रगति अवश्य होगी । विनय भाव से सद्गुणों का विकास होगा दूसरों की सेवा करने की सच्ची निःस्वार्थ धुन है तो हृदय अवश्य शुद्ध होगा । दृढ़ विश्वास है तो आत्म-साक्षात्कार अवश्य होगा । यदि सच्चा वैराग्य है तो ज्ञान निःसंदेह होगा । यदि अटूट धैर्य है तो शांति अवश्य मिलेगी । यदि सतत प्रयत्न है तो विघ्न-बाधाएँ अवश्य नष्ट होंगी । यदि सच्चा समर्पण है तो भक्ति अवश्य आ जायेगी । यदि पूर्ण निर्भरता है तो निरंतर कृपा का अनुभव अवश्य होगा । यदि दृढ़ परमात्म-चिंतन है तो संसार का चिंतन अवश्य मिट जायेगा । यदि सद्गुरु का दृढ़ आश्रय है तो बोध अवश्य होगा । जहाँ पूर्ण प्रेम विकसित होगा वहाँ पूर्णानंद की स्थिति अवश्य सुलभ होगी । **('इष्टसिद्धि' पुस्तक से)**

जीवनशक्ति का विकास

(गतांक से आगे)

पर में भी वे ही परमात्मा हैं। व्यक्तित्व की स्वार्थपरायणता जितनी कम होती है, छोटा दायरा टूटने लगता है, बड़े दायरे में वृत्ति आती है, परहित के लिए चिंतन व चेष्टा होने लगती है तभी आदमी वास्तव में बड़प्पन पाता है।

गुलाब का फूल खिला है और सुवास प्रसारित कर रहा है, कइयों को आकर्षित कर रहा है तो उसकी खिलने की और आकर्षित करने की योग्यता गहराई से देखो तो मूल के कारण है। ऐसे ही किसी आदमी की ऊँचाई, महक, योग्यता दिखती है तो जाने-अनजाने उसने जहाँ से मनःवृत्ति फुरती है उस मूल में थोड़ी-बहुत गहरी यात्रा की है, तभी यह ऊँचाई मिली है।

धोखाधड़ी के कारण आदमी ऊँचा हो जाता तो सब क्रूर आदमी, धोखेबाज लोग ऊँचे उठ जाते। वास्तव में ऊँचे उठे हुए व्यक्ति ने अनजाने में एकत्व का आदर किया है, अनजाने में समता की कुछ महक उसने पायी है। **दुनिया के सारे दोषों का मूल कारण है देह का अहंकार, जगत में सत्यबुद्धि और विषय-विकारों से सुख लेने की इच्छा।** सारे दुःखों का, विघ्नों का, बीमारियों का यही मूल कारण है। सारे सुखों का मूल कारण है जाने-अनजाने में देहाध्यास से थोड़ा ऊपर उठ जाना; अहंता, ममता और जगत की आसक्ति से ऊपर उठ जाना। जो आदमी कार्य के लिए कार्य करता है, फलेच्छा की लोलुपता जितनी कम होती है उतने अंश में वह ऊँचा उठता है और सफल होता है।

सफलता का रहस्य है आत्मश्रद्धा, आत्मप्रीति, अंतर्मुखता, प्राणिमात्र के लिए प्रेम, परहितपरायणता।

परहित बस जिन्ह के मन माहीं।
तिन्ह कहुँ जग दुर्लभ कछु नाहीं ॥

एक बच्चे ने अपने भाई से कहा : 'पिताजी तुझे पीटेंगे।' भाई ने कहा : 'पीटेंगे तो पीटेंगे... मेरी भलाई के लिए पीटेंगे। इससे तुझे क्या मिलेगा ?'

ऐसे ही मन अगर कहने लगे कि 'तुम पर यह मुसीबत पड़ेगी, भविष्य में यह दुःख होगा, भय होगा' तो निश्चिंत रहो कि अगर परमात्मा दुःख, क्लेश आदि देंगे तो हमारी भलाई के लिए देंगे। अगर हम पिता की आज्ञा मानते हैं, वे जैसा चाहते हैं वैसा हम करते हैं तो पिता पागल थोड़े ही हैं कि हमें पीटेंगे ? ऐसे ही सृष्टिकर्ता परमात्मा हमें दुःख क्यों देंगे ? दुःख तो तब देंगे जब हम गलत मार्ग पर जायेंगे। गलत रास्ते जाते हैं तो ठीक रास्ते पर लगाने के लिए दुःख देंगे। दुःख आयेगा तभी जगन्नियंता का द्वार मिलेगा। परमात्मा सभीके परम सुहृद हैं। वे सुख भी देते हैं तो हित के लिए और दुःख भी देते हैं तो हित के लिए। भविष्य के दुःख की कल्पना करके घबड़ाना, चिंतित होना, भयभीत होना नहीं चाहिए। जो आयेगा, आयेगा... देखा जायेगा। अभी वर्तमान में प्रसन्न रहो, स्वार्थ का त्याग करो और धर्मपरायण रहो।

सारे दुःखों की जड़ है स्वार्थ और अहंकार। स्वार्थ और अहंकार छोड़ते गये तो दुःख अपने-आप छूटते जायेंगे। कितने भी बड़े दुःख हों, आप त्याग और प्रसन्नता के प्रेमी बनो तो सारे दुःख रवाना हो जायेंगे। जगत की आसक्ति, परदोषदर्शन और भोग का प्रेमी बनने से आदमी को सारे दुःख घेर लेते हैं।

(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'जीवन विकास' से क्रमशः) ☐
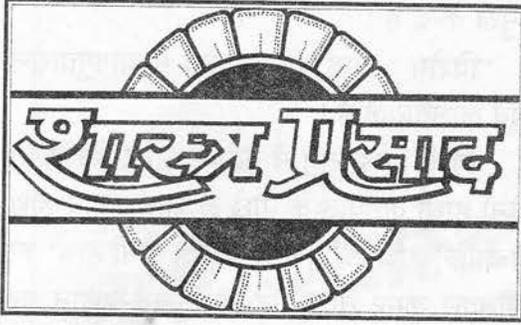
वे पाप जो प्रायश्चित्तरहित हैं

धर्मराज (मृत्यु के अधिष्ठाता देव) राजा भगीरथ से कहते हैं : ''भूपाल ! जो स्नान अथवा पूजन के लिए जाते हुए लोगों के कार्य में विघ्न डालता है, उसे ब्रह्मघाती कहते हैं । जो परायी निंदा और अपनी प्रशंसा में लगा रहता है तथा जो असत्य भाषण में रत रहता है, वह ब्रह्महत्यारा कहा गया है ।

जो अधर्म का अनुमोदन करता है उसे ब्रह्मघात का पाप लगता है । जो दूसरों को उद्वेग में डालता है, चुगली करता है और दिखावे में तत्पर रहता है, उसे ब्रह्महत्यारा कहते हैं ।

भूपते ! जो पाप प्रायश्चित्तरहित हैं, उनका वर्णन सुनो । वे पाप समस्त पापों से बड़े तथा भारी नरक देनेवाले हैं । ब्रह्महत्या आदि पापों के निवारण का उपाय तो किसी प्रकार हो सकता है परंतु जो ब्राह्मण अर्थात् जिसने ब्रह्म को जान लिया है ऐसे महापुरुष से द्वेष करता है, उसका पाप से कभी भी निस्तार नहीं होता ।

नरेश्वर ! जो विश्वासघाती तथा कृतघ्न हैं उनका उद्धार कभी नहीं होता । जिनका चित्त वेदों की निंदा में ही रत है और जो भगवत्कथा-वार्ता आदि की निंदा करते हैं, उनका इहलोक तथा परलोक में कहीं भी उद्धार नहीं होता ।

भूपते ! जो महापुरुषों की निंदा को आदरपूर्वक सुनते हैं, ऐसे लोगों के कानों में तपाये हुए लोहे की बहुत-सी कीलें ठोक दी जाती हैं । तत्पश्चात् कानों के उन छिद्रों में अत्यंत गरम किया हुआ तेल भर दिया जाता है । फिर वे कुंभीपाक नरक में पड़ते हैं ।

जो दूसरों के दोष बताते या चुगली करते हैं, उन्हें एक सहस्र युग तक तपाये हुए लोहे का पिण्ड भक्षण करना पड़ता है । अत्यंत भयानक सँड़सों से उनकी जीभ को पीड़ा दी जाती है और वे अत्यंत घोर निरुच्छ्वास नामक नरक में आधे कल्प तक निवास करते हैं ।

श्रद्धा का त्याग, धर्मकार्य का लोप, इन्द्रिय-संयमी पुरुषों की और शास्त्र की निंदा करना महापातक बताया गया है ।

जो परायी निंदा में तत्पर, कटुभाषी और दान में विघ्न डालनेवाले होते हैं वे महापातकी बताये गये हैं । ऐसे महापातकी लोग प्रत्येक नरक में एक-एक युग रहते हैं और अंत में इस पृथ्वी पर आकर वे सात जन्मों तक गधा होते हैं । तदनंतर वे पापी दस जन्मों तक घाव से भरे शरीरवाले कुत्ते होते हैं, फिर सौ वर्षों तक उन्हें विष्ठा का कीड़ा होना पड़ता है । तदनंतर बारह जन्मों तक वे सर्प होते हैं । राजन् ! इसके बाद एक हजार जन्मों तक वे मृग आदि पशु होते हैं । फिर सौ वर्षों तक स्थावर (वृक्ष आदि) योनियों में जन्म लेते हैं । तत्पश्चात् उन्हें गोधा (गोह) का शरीर प्राप्त होता है । फिर सात जन्मों तक वे पापाचारी चाण्डाल होते हैं । इसके बाद सोलह जन्मों तक उनकी दुर्गति होती है । फिर दो जन्मों तक वे दरिद्र, रोगपीड़ित तथा सदा प्रतिग्रह लेनेवाले होते हैं । इससे उन्हें फिर नरकगामी होना पड़ता है ।

राजन् ! जो झूठी गवाही देता है, उसके पाप का फल सुनो । वह जब तक चौदह इंद्रों का राज्य समाप्त होता है, तब तक सम्पूर्ण यातनाओं को भोगता रहता है । इस लोक में उसके पुत्र-पौत्र नष्ट हो जाते हैं और परलोक में वह रौरव तथा अन्य नरकों को क्रमशः भोगता है ।''

(नारद पुराण, पूर्व भाग-प्रथम पाद : अध्याय १५) ❐

योगमुद्रासन

योगाभ्यास में यह मुद्रा अति महत्त्वपूर्ण है इसलिए इसका नाम 'योगमुद्रासन' रखा गया है।

लाभ : इस आसन के अभ्यास से -

१. जठराग्नि प्रदीप्त होती है । गैस, अपचन, पुराना कब्ज आदि पेट की बीमारियाँ दूर होती हैं।

२. बढ़ा हुआ पेट अंदर दब जाता है। शरीर सुडौल तथा मजबूत बनता है।

३. आँतों की सभी शिकायतें दूर होती हैं। हृदय मजबूत बनता है।

४. रक्त के विकार दूर होते हैं। कुष्ठ और यौन-विकार नष्ट होते हैं।

५. मानसिक तथा बौद्धिक शक्ति बढ़ती है।

६. नाड़ीतंत्र और खास करके कमर के नाड़ी-मण्डल को बल मिलता है।

७. पेन्क्रियाज (अग्न्याशय) क्रियाशील होकर मधुमेह को नियंत्रित करता है। डायबिटीजवालों के लिए यह आसन हितकारी है।

८. रीढ़ की हड्डी की समस्त कशेरुकाएँ एक-दूसरे से अलग होकर सुषुम्ना नाड़ी को साफ और हलका करती हैं, जिससे मस्तिष्क की क्रियाओं में विशेष स्फूर्ति आती है।

९. मणिपुर चक्र जागृत होता है, जो कि प्रत्येक व्यक्ति के अंदर छिपी हुई शक्ति का एक प्रमुख केन्द्र है।

विशेष : धातु की दुर्बलता में योगमुद्रासन खूब लाभदायक है।

विधि : पद्मासन में बैठकर आँखें बंद करें। दोनों हाथों को पीठ के पीछे ले जायें। बायें हाथ से दाहिने हाथ की कलाई पकड़ें। दोनों हाथों को खींचकर कमर तथा रीढ़ के मिलन-स्थान पर रखें। श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ललाट को जमीन से लगायें। कुछ समय इस स्थिति में रुककर आराम करें और श्वास साधारण रूप से चलने दें।
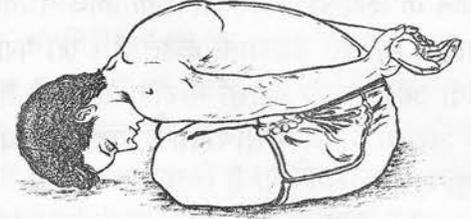
फिर धीरे-धीरे गहरा श्वास लेते हुए सिर को उठाकर शरीर को पुनः सीधा कर दें और श्वास सामान्य चलने दें। इसे ४-५ बार दोहरायें। प्रारंभ में यह आसन कठिन लगे तो सुखासन या सिद्धासन में बैठकर करें। पूर्ण लाभ तो पद्मासन में बैठकर करने से ही होता है। सामान्यतया यह आसन ३ मिनट तक करना चाहिए। आध्यात्मिक उद्देश्य से योगमुद्रासन करते हों तो समय की अवधि रुचि और शक्ति के अनुसार बढ़ायें। ❐

विशेष सूचना

सूचित किया जाता है कि 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका की सदस्यता के नवीनीकरण के समय पुराना सदस्यता क्रमांक/रसीद-क्रमांक एवं सदस्यता 'पुरानी' है - ऐसा लिखना अनिवार्य है। जिसकी रसीद में ये नहीं लिखे होंगे, उस सदस्य को नया सदस्य माना जायेगा।

निद्रा-विचार

त्रय उपस्तम्भा इत्याहारः स्वप्नो ब्रह्मचर्यमिति ।

'आहार, निद्रा व ब्रह्मचर्य शरीर के तीन उपस्तंभ हैं अर्थात् इनके आधार पर शरीर स्थित है ।' **(चरक संहिता, सूत्रस्थानम् : ११.३५)**

इनके युक्तिपूर्वक सेवन से शरीर स्थिर होकर बल-वर्ण से सम्पन्न व पुष्ट होता है । (आहार-विषयक वर्णन गत अंकों में दिया गया है ।)

'निद्रा' की महत्ता का वर्णन करते हुए चरकाचार्यजी कहते हैं :

जब कार्य करते-करते मन थक जाता है एवं इन्द्रियाँ भी थकने के कारण अपने-अपने विषयों से हट जाती हैं, तब मन और इन्द्रियों के विश्रामार्थ मनुष्य सो जाता है । निद्रा से शरीर को सर्वाधिक विश्राम मिलता है । विश्राम से पुनः बल की प्राप्ति होती है । शरीर को टिकाये रखने के लिए जो स्थान आहार का है, वही निद्रा का भी है ।

निद्रा के लाभ :

सुखपूर्वक निद्रा से शरीर की पुष्टि व आरोग्य, बल एवं शुक्र धातु की वृद्धि होती है । साथ ही ज्ञानेन्द्रियाँ सुचारु रूप से कार्य करती हैं तथा व्यक्ति को पूर्ण आयु-लाभ प्राप्त होता है ।

निद्रा उचित समय पर उचित मात्रा में लेनी चाहिए । असमय तथा अधिक मात्रा में शयन करने से अथवा निद्रा का बिल्कुल त्याग कर देने से आरोग्य व आयुष्य का ह्रास होता है । दिन में शयन स्वास्थ्य के लिए अत्यंत हानिकर है परंतु जो व्यक्ति अधिक अध्ययन, अत्यधिक श्रम करते हैं, धातु-क्षय से क्षीण हो गये हैं, रात्रि-जागरण अथवा मुसाफिरी से थके हुए हैं वे तथा बालक, वृद्ध, कृश, दुर्बल व्यक्ति दिन में शयन कर सकते हैं ।

ग्रीष्म ऋतु में रात छोटी होने के कारण व शरीर में वायु का संचय होने के कारण दिन में थोड़ी देर शयन करना हितावह है ।

घी व दूध का भरपूर सेवन करनेवाले, स्थूल, कफ-प्रकृतिवाले व कफजन्य व्याधियों से पीड़ित व्यक्तियों को सभी ऋतुओं में दिन की निद्रा अत्यंत हानिकारक है ।

दिन में सोने से होनेवाली हानियाँ :

दिन में सोने से जठराग्नि मंद हो जाती है । अन्न का ठीक से पाचन न होकर अपाचित रस (आम) बन जाता है, जिससे शरीर में भारीपन, शरीर टूटना, जी मिचलाना, सिरदर्द, हृदय में भारीपन, त्वचारोग आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं । तमोगुण बढ़ने से स्मरणशक्ति व बुद्धि का नाश होता है ।

अतिनिद्रा दूर करने के उपाय :

उपवास, प्राणायाम व व्यायाम करने तथा तामसी आहार (लहसुन, प्याज, मूली, उड़द, बासी व तले हुए पदार्थ आदि) का त्याग करने से अतिनिद्रा का नाश होता है ।

अनिद्रा

कारण : वात व पित्त का प्रकोप, धातुक्षय, मानसिक क्षोभ, चिंता व शोक के कारण सम्यक् नींद नहीं आती ।

लक्षण : शरीर मसल दिया हो ऐसी पीड़ा, शरीर व सिर में भारीपन, चक्कर, जँभाइयाँ, अनुत्साह व अजीर्ण ये वायुसंबंधी लक्षण अनिद्रा से उत्पन्न होते हैं ।

अनिद्रा दूर करने के उपाय :

सिर पर तेल की मालिश, पैर के तलुओं में घी की मालिश, कान में नियमित तेल डालना, संवाहन (अंग दबवाना), घी, दूध (विशेषतः भैंस का), दही व भात का सेवन, सुखकर शय्या व मनोनुकूल वातावरण से अनिद्रा दूर होकर शीघ्र निद्रा आ जाती है।

सहचर सिद्ध तैल (जो आयुर्वेदिक औषधियों की दुकान पर प्राप्त हो सकेगा) से सिर की मालिश करने से शांत व प्रगाढ़ नींद आती है।

कुछ खास बातें :

* कफ व तमोगुण की वृद्धि से नींद अधिक आती है तथा वायु व सत्त्वगुण की वृद्धि से नींद कम होती है।

* रात्रि-जागरण से वात की वृद्धि होकर शरीर रुक्ष होता है। दिन में सोने से कफ की वृद्धि होकर शरीर में स्निग्धता बढ़ जाती है परंतु बैठे-बैठे थोड़ी-सी झपकी लेना रुक्षता व स्निग्धता दोनों को नहीं बढ़ाता व शरीर को विश्राम भी देता है।

* सोते समय पूर्व अथवा दक्षिण की ओर सिर करके सोना चाहिए।

* हाथ-पैरों को सिकोड़कर, पैरों के पंजों की आँटी (क्रॉस) करके, सिर के पीछे तथा ऊपर हाथ रखकर व पेट के बल नहीं सोना चाहिए।

* सूर्यास्त के दो-ढाई घंटे बाद सो जाना व सूर्योदय से दो ढाई-घंटे पूर्व उठ जाना उत्तम है।

* सोने से पहले शास्त्राध्ययन करके प्रणव (ॐ) का दीर्घ उच्चारण करते हुए सोने से नींद भी उपासना हो जाती है।

निद्रा लाने का मंत्र :

शुद्धे शुद्धे महायोगिनी महानिद्रे स्वाहा।

इस मंत्र का जप करते हुए सोने से प्रगाढ़ व शांत निद्रा आती है। ❑

हिन्दू समाज व धर्माचार्यों को बदनाम करने का विश्वव्यापी षड्यंत्र

राष्ट्र में अध्यात्म-संस्कृति के प्रेरणास्रोत, परम श्रद्धेय विश्वविभूति पूज्य संतप्रवर आसारामजी बापू राष्ट्र की ही नहीं विश्व की अद्भुत धरोहर हैं। सतत आध्यात्मिकता का अलख जगानेवाले इन महामानव पर भी बेतुके आरोप लगाकर इनकी छवि को षड्यंत्र के तहत बदनाम करने की घिनौनी साजिश की गयी। हर युग में दैवी व आसुरी शक्तियाँ रही हैं। भगवान श्रीराम व श्रीकृष्ण जैसे अवतारों पर भी लांछन लगे लेकिन सोना तो सदैव खरा ही रहता है। वर्तमान समाज में ऐसे अनेक स्वार्थी तत्त्व हैं जो दूसरों का मान-सम्मान नहीं देख सकते। श्रद्धेय बापूजी के द्वारा अध्यात्म संस्कृति का जो संरक्षण और संवर्द्धन हो रहा है, वह अद्वितीय है। छोटे-छोटे बच्चों को गुरुकुल परम्परा द्वारा श्रेष्ठ संस्कार देना उनके भविष्य का निर्माण करना है। आज सम्पूर्ण भारत में बापूजी का आदर है और बड़े पैमाने पर अनेक धार्मिक कार्यक्रम व सेवाकार्य चल रहे हैं। लाखों की संख्या में श्रद्धालु जनता उनके प्रवचनों में भाग लेती है और उनकी शिष्य-परम्परा में है। ऐसे संत पर बेतुके, निरर्थक आरोप लगाकर एवं उनकी संस्थाओं पर अनर्गल आरोप मढ़कर घिनौनी साजिश रची जा रही है। आज हिन्दू समाज एवं संबंधित धर्माचार्यों को बदनाम करने का विश्वव्यापी षड्यंत्र चल रहा है, यह घिनौनी साजिश है। इसलिए हिन्दू समाज का संगठन नितांत आवश्यक है।

श्रद्धेय बापूजी की कीर्ति, यश पताका निरंतर विश्व व आध्यात्मिक समाज का मार्गदर्शन कर रही है और वे आगे भी भारत में आध्यात्मिक ऊर्जा के प्रेरणास्रोत बनकर लोक-कल्याणकारी कार्यों का पथ-प्रदर्शन करेंगे। **- श्री भानुमित्र शर्मा**

सम्पादक, सुविख्यात पत्रिका 'गीता संदेश'।

('श्री गीता आश्रम इण्टरनेशनल चैरिटेबल ट्रस्ट' द्वारा प्रकाशित) ❑

मंत्रदीक्षा व ध्यान के प्रभाव से सफलताएँ

मैंने वर्ष २००२ में पूज्य बापूजी से सारस्वत्य मंत्र की दीक्षा ली और उसी वर्ष एम.कॉम. (फर्स्ट ईयर) की परीक्षा में ८०.५% अंक प्राप्त किये, तत्पश्चात् प्रतिष्ठित 'एपीजे इंस्टीट्यूट, ग्रेटर नोयडा' से एम.बी.ए. की डिग्री प्रथम श्रेणीसहित प्राप्त की।

यह बापूजी की कृपा एवं सारस्वत्य मंत्र से उत्पन्न एकाग्रता का परिणाम ही था कि ट्रैनी बैंक अधिकारी का पदभार सँभालते हुए, समय के अति अभाव के बावजूद भी मैंने एक प्राइवेट छात्र के रूप में एम.कॉम. (फाइनल) की परीक्षा ७०% अंकों से उत्तीर्ण की, साथ ही 'फ्लाइंग ऑफीसर' पद की ऑल इंडिया स्तर की प्रतियोगी परीक्षा सफलतापूर्वक उत्तीर्ण की।

नवम्बर २००६ में 'वायुसेना सिलेक्शन बोर्ड, बनारस' द्वारा ली गयी विभिन्न परीक्षाओं एवं कठिन साक्षात्कार परीक्षा में भी मैंने मंत्रदीक्षा एवं पूज्य बापूजी के ध्यान के अद्भुत प्रभाव से लाखों परीक्षार्थियों में से छँटकर करीब ३०० प्रतियोगियों और उनमें से भी कुल छः चयनित उम्मीदवारों में स्थान पाने में सफलता प्राप्त की। समस्त सिलेक्शन बोर्डों द्वारा चयनित समस्त उम्मीदवारों की अंतिम रूप से बनी मेरिट सूची में भी स्थान प्राप्त कर मैंने 'वायुसेना एकेडमी' ज्वाइन की और फ्लाइंग ऑफीसर का पद प्राप्त किया।

मैंने बापूजी से मन-ही-मन प्रार्थना की कि 'हे बापूजी ! मेरी नियुक्ति ऐसे स्थान पर हो जाय जहाँ आपका आश्रम हो तथा सत्संग-लाभ मिलता रहे।' और बापूजी की अपार कृपा का ही यह परिणाम है कि आज मैं 'बड़ौदा एयर फोर्स स्टेशन' पर नियुक्त हूँ। यहाँ पर मैं ही नहीं, मेरे माता-पिताजी भी आकर पूज्य बापूजी का दर्शन-सत्संग लाभ प्राप्त करते हैं।

उल्लेखनीय होगा कि मेरे साथ मेरी बड़ी दीदी डॉ. अनुपमा सिंह ने आगे की पढ़ाई के लिए अमेरिका जाने से पूर्व तथा छोटा भाई कुँवर अभिषेक सिंह, जो कि अब मैनेजर है, ने लंदन (इंग्लैण्ड) से आकर बापूजी से दीक्षा ग्रहण की। हम सभी बापूजी के साधक के रूप में संतुष्ट हैं, खुश हैं। पूजनीय बापूजी से आगे भी प्रार्थना है कि मेरी बापूजी के श्रीचरणों में श्रद्धा-भक्ति तथा सेवा-भावना बनी रहे।

– अनुराधा सिंह
फ्लाइंग लेफ्टिनेंट, बड़ौदा (गुज.)। □

''भक्त जब एक निश्चित सोपान तक पहुँचता है और बोध (ज्ञान) का अधिकारी बनता है तब जिसकी वह भक्ति करता है वही भगवान गुरु के हृदय में बोलते हैं और उसको मार्गदर्शन देते हैं। गुरु उसे यह कहने के लिए ही आते हैं कि 'भगवान तेरे अंदर हैं। भीतर गोता मार और उसे जान ले।' भगवान, गुरु और आत्मा एक ही हैं।

गुरुकृपा तो हमेशा होती है। तुम ऐसी कल्पना करते हो कि वह एक ऐसी चीज है जो कहीं दूर, ऊँचे आसमान में है और वह उतरेगी। सचमुच वह तुम्हारे हृदय में है। जिस क्षण तुम मन को उसके अधिष्ठान में विलीन कर देते हो, उसी क्षण तुम्हारे भीतर से गुरुकृपा का फव्वारा छूटता है।''

– श्री रमण महर्षि

('ऋषि प्रसाद' प्रतिनिधि)

अनेक बड़े-बड़े शहरों में जब लाखों लोग पूज्य बापूजी की प्रतीक्षा में पलकें बिछाये बैठे हैं, तभी करुणामूर्ति, दीनवत्सल बापूजी सत्संग से वंचित जनमानस में भगवद्भक्ति, भगवद्रस का अमृत बाँटने छोटे-छोटे कस्बों-गाँवों में निकल पड़े । इस दौरान कई जरूरतमंद दरिद्रनारायणों को ठण्ड से बचने के लिए रजाई-कम्बल तथा सर्दियों में शरीर को पोषण देनेवाले शुंठी पाक, खजूर आदि सामग्रियों का वितरण तो किया ही, साथ ही संसार में सुख-दुःख के आघातों से बचने हेतु सत्संग का कवच देकर भगवद्रस-भगवद्भक्ति से मन-बुद्धि-हृदय को पुष्ट किया ।

१ दिसम्बर को **छोटी खाटू (राज.)** के भाग्यशाली भक्तों को सत्संग का सुअवसर प्राप्त हुआ । नाम के अनुरूप ही गाँव तो छोटा ही था पर यहाँ के लोगों की श्रद्धा व उत्साह उतने ही विशाल थे । ऐसा लगता था मानों एक ही सत्र के इस सत्संग में सारा गाँव ही इकट्ठा हो गया हो । विद्यार्थियों ने भी इस मौके पर पूज्यश्री का सत्संग-मार्गदर्शन प्राप्त किया व सफल जीवन की यौगिक कुंजियाँ प्राप्त कीं ।

५ दिसम्बर का दिन **पिपाड़ (राज.) वासियों** के लिए उत्सव का दिन रहा क्योंकि इस दिन यहाँ उनके प्यारे सद्गुरु का आगमन हुआ था । पिपाड़ के सत्संगप्रेमियों को सत्संग की महिमा से अवगत कराते हुए पूज्यश्री ने सत्संगामृत से तृप्त किया । रात्रि को **जोधपुर (राज.)** आश्रम में पूज्यश्री का आगमन हुआ ।

७ दिसम्बर को १ सत्र का कार्यक्रम **जोधपुर** आश्रम में रहा । न कोई प्रचार न प्रसार फिर भी यहाँ उमड़ी हुई भीड़ के आगे सत्संग-मंडप छोटा पड़ गया । आम श्रद्धालुओं के साथ आध्यात्मिक जगत के मान्यवर संतों ने भी पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग का लाभ एवं सनातन संस्कृति के रक्षण व प्रचार संबंधी महत्त्वपूर्ण मार्गदर्शन प्राप्त किया । अच्छाई-बुराई से भी ऊँचे उठकर परमात्मतत्त्व को पाने की कुंजी देते हुए पूज्यश्री ने गीता के इस श्लोक को उद्धृत किया :

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च ।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ॥

'पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार भी- इस प्रकार यह आठ प्रकार से विभाजित मेरी प्रकृति है । यह आठ प्रकार के भेदोंवाली तो अपरा अर्थात् मेरी जड़ प्रकृति है ।'

(गीता : ७.४)

अच्छाई-बुराई आदि सब इस अष्टधा प्रकृति में होते हैं, हमारा वास्तविक स्वरूप इनसे भिन्न है ।

एकांतवास के दौरान लुट रहे इस तात्त्विक सत्संग का लाभ उठाने में जोधपुर के पुण्यात्माओं ने कोई कमी नहीं रखी ।

१० दिसम्बर को पूज्यश्री का **अमदावाद आश्रम** में पदार्पण हुआ । सभी धर्म, सभी जाति, सभी देशों के लोग पूज्य बापूजी की अमृतवाणी का रसपान करने में आनंद का अनुभव करते हैं इसका प्रत्यक्ष प्रमाण प्रस्तुत करते हुए १० दिसम्बर को पाकिस्तान के सवाई शामगिरि मठ, मीरपुर खास, टंडो आदम, बेराणी, तलहार पदीर आदि अनेक स्थानों से आये श्रद्धालुओं ने पूज्य बापूजी के सत्संग-दर्शन का लाभ लिया ।

इस बार पूर्णिमा-दर्शन कार्यक्रम अमदावाद एवं दिल्ली - दो स्थानों में विभाजित हुआ ।

११ व १२ दिसम्बर को सुबह तक यहाँ पूर्णिमा दर्शन व सत्संग कार्यक्रम हुआ । गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ समेत विविध राज्यों से

आये लाखों श्रद्धालुओं ने इस अवसर पर दर्शन-सत्संग का लाभ लिया।

व्यासपीठ पर आते ही पूज्य बापूजी ने भक्तों से पूछा : ''तुम लोगों को इतना सान्निध्य मिला अभी पेट नहीं भरा ? अभी तृप्ति नहीं हुई ?''

भक्तों से आवाज आयी : ''नहीं।''

फिर पूज्यश्री बोले : ''जिनको आध्यात्मिकता में तृप्ति हो गयी उन्होंने आध्यात्मिक रस जाना ही नहीं, जिनका पेट भर गया उन्होंने आध्यात्मिकता का महत्त्व जाना ही नहीं। संसार से तो उबान हो जाती है, भोजन से तो पेट भरता है लेकिन आध्यात्मिक खजाना तो ऐसा है कि ज्यों पीयो त्यों रस और ! आध्यात्मिक रस पचता भी जाता है और भूख भी लगाता जाता है। जैसे आँवले का रस और शहद रोग को मिटाता जाता है, हजम होता है और भूख भी लगाता जाता है, ऐसे ही सच्ची श्रद्धा हो तो भूख भी लगती जाती है और पाचन भी होता जाता है।

आध्यात्मिक भूख के बिना भौतिक भूख मिट नहीं सकती। उबान आ सकती है लेकिन मिट नहीं सकती। आध्यात्मिक उन्नति के सिवाय नैतिक उन्नति हो नहीं सकती और नैतिक उन्नति के सिवाय भौतिक उन्नति दुःख दिये बिना, परेशान किये बिना रह नहीं सकती।''

१२ (दोपहर) से १४ दिसम्बर तक **दिल्ली** के जापानी पार्क, **रोहिणी** में पूर्णिमा दर्शन व सत्संग कार्यक्रम आयोजित हुआ। 'सांसारिक चीजों के आश्रय से मनुष्य तुच्छ हो जाता है तथा भगवदाश्रय से सार सुख आकर प्राप्त हो जाते हैं व मनुष्य वास्तविक उन्नति की ओर बढ़ता है।' मनुष्य-जीवन का यह दार्शनिक तथ्य उजागर करते हुए पूज्यश्री ने भगवदाश्रय की महिमा व्यक्त की।

संसार की प्रीति, रति व तृप्ति पाने में लगे जीव को आत्मज्ञान पाकर आत्मप्रीति, आत्मरति व आत्मतृप्ति से सम्पन्न होने का सुगम मार्ग पूज्यश्री ने दर्शाया।

तीन दिनों में हुए सत्रों में दिल्लीवासी भगवद्रस से छक गये। १४ दिसम्बर की दोपहर में सत्संग-कार्यक्रम की पूर्णाहुति थी फिर भी दिल नहीं भरा तो यहाँ के भक्तों ने अत्यंत अनुनय-विनय व प्रार्थना करके १ सत्र और बढ़ाने की माँग की। उनकी इस प्रार्थना को स्वीकार करते हुए पूज्य बापूजी ने शाम का सत्र भी दिल्ली के नाम कर दिया और प्रभु के प्यारे, गुरु के दुलारे धन्य-धन्य हो गये।

१६ व १७ दिसम्बर का सत्संग **नारनौल (हरि.)** की झोली में रहा। दिल्ली से बापूजी सुबह नारनौल के लिए निकले और यह खबर वायु की तरह फैल गयी। मार्ग में जगह-जगह पर भक्तगण हाथों में पुष्पहार और आँखों में इंतजार लिये खड़े थे। एक दीदार के लिए तरस रहे इन दीवानों को जब दर्शन के साथ-साथ कुछ सत्संग-वचनामृत भी मिला तो इनकी खुशी का ठिकाना ही नहीं रहा !

१६ दिसम्बर की शाम को पूज्यश्री नारनौल पहुँचे तो हजारों लोगों से पंडाल खचाखच भर चुका था और पंडाल के बाहर भी लोग खड़े थे। स्थानीय लोगों के अनुसार इतनी भीड़ तो आज तक नारनौल में कभी नहीं देखी गयी थी। महर्षि च्यवन की तपःस्थली और प्रसिद्ध ऐतिहासिक पुरुष बीरबल की जन्मस्थली नारनौल की जनता को सम्बोधित करते हुए पूज्यश्री ने कहा : ''जीव को अपने कर्म का फल सुख-दुःख आप ही भुगतना पड़ता है और जब तक कर्तृत्व रहता है तब तक कर्म का बंधन होता है। जब आत्मा में रति-प्रीति हुई, कर्तृत्व शांत हो गया तो भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : **तस्य कार्यं न विद्यते।** उसके लिए कोई कर्तव्य नहीं है, वह महापुरुष हो गया। फिर वह चाहे शुकदेवजी की नाईं भिक्षान्न पर जीता हो, चाहे रामजी की नाईं अयोध्या सँभालता हो या राजा जनक की नाईं मिथिला सँभालता हो, उसके लिए वह लोक-मांगल्य का सहज कार्य हो जाता है।''

यहाँ विशाल भंडारे का भी आयोजन किया गया।

१७ दिसम्बर की **शाम** व **१८ दिसम्बर** की **सुबह** के २ सत्र **महेन्द्रगढ़ (हरि.)** वासियों के नाम रहे। यहाँ के नवनिर्मित आश्रम में पूज्यश्री का प्रथम बार पदार्पण होने से साधक-भक्तों में हर्षोल्लास का माहौल रहा। पूज्यश्री ने महेन्द्रगढ़ की जनता को गौ-पालन व गौ-रक्षा के प्रति जागरूक किया।

जिज्ञासुओं के इस प्रश्न पर कि 'ज्ञानी महापुरुषों के क्या लक्षण होते हैं ?' ब्रह्मवेत्ता सद्गुरु पूज्य बापूजी ने कहा :

''ब्रहम गिआनी की मिति कउनु बखानै।
ब्रहम गिआनी की गति ब्रहम गिआनी जानै।

ज्ञानी महापुरुषों को कोई भी अपने तराजू में नहीं तौल सकता। शुकदेवजी त्यागी थे, विरक्त थे तो वसिष्ठजी के १०० पुत्र थे। बाहरी व्यवहार से ज्ञानी की परख नहीं होती अपितु श्रद्धाभरे हृदय से उनकी महानता का कुछ अनुभव हो सकता है।''

१८ दिसम्बर की दोपहर को **रेवाड़ी आश्रम (हरि.)** में सत्संग व विशाल भंडारे का आयोजन हुआ। यहाँ के गरीबों, जरूरतमंदों में रजाई, शुंठी पाक, कैलेंडर, श्रीचित्र आदि सामग्री का निःशुल्क वितरण हुआ। इस मौके पर समाज की गणमान्य हस्तियाँ भी यहाँ उपस्थित थीं। श्रद्धालुओं को सम्बोधित करते हुए पूज्यश्री ने कहा कि ''कोई यह न समझे कि भंडारे का लाभ लेनेवाले ही गरीब हैं। वस्तुतः ऐहिक विद्या, धन, पद आदि पाकर खुद को अमीर, बड़े माननेवाले सभी आत्मविद्या व वास्तविक सुख के अभाव में गरीब हैं। इन्द्रियों के, मन के अधीन होकर जीनेवाले सभी गरीब ही हैं।''

सचमुच, ऐसी दो टूक बात तो कोई-कोई विरले हमारे परम हितैषी महात्मा ही कह सकते हैं।

२० व २१ दिसम्बर का सत्संग **सोहना (हरि.)** वासियों के भाग्य में रहा। पूज्य बापूजी के सान्निध्य में सोहना के भक्तों ने आध्यात्मिक जगत के अनेक रंगों का अनुभव किया। कभी ध्यान की गहराई में शांति का अनुभव करते हुए तो कभी कीर्तन की धुन पर झूमते हुए सोहना बापूमय हो गया ! 'ईश्वर न्याय करता है कि कृपा करता है ?'- जिज्ञासुओं के इस संशय को छिन्न-भिन्न करते हुए पूज्य बापूजी ने ईश्वर के न्याय को कर्म-सिद्धांत के रूप में व कृपा को भक्ति-सिद्धांत के रूप में वर्णित किया। वे बोले : ''ईश्वर न्यायकारी भी है, कृपालु भी है और हम सबका परम सुहृद भी है। ईश्वर सृष्टि में दुष्टों के प्रति दंड देकर न्याय करता है, जो अपनी गलतियों के लिए पश्चात्ताप करते हैं उनके प्रति दया करता है तथा जो भक्त हैं उनके प्रति वह सुहृद है। भगवान 'भयकृत्' अर्थात् भय देनेवाला और 'भयनाशन' अर्थात् भय-नाश करनेवाला भी है।''

भगवान एवं गुरु के दरबार में सभी प्रकार के लोगों को ऊपर उठाया जाता है इस बात पर भी पूज्यश्री ने प्रकाश डाला : ''संसार में तीन प्रकार के लोग होते हैं। एक तो साधनविहीन, दूसरे साधनसम्पन्न और तीसरे कुसाधनवाले। अहिल्या भगवान को पाने के लिए साधनविहीन है, पत्थर के रूप में पड़ी है और भगवान अपनी करुणा से उसका उद्धार कर देते हैं। ऋषि-मुनि साधनसम्पन्न हैं और भगवान उन्हें जरा-सा उपदेश, संकेत अथवा सद्गुरु की मुलाकात करा देते हैं। राजा परीक्षित साधनसम्पन्न हैं तो ७ दिन में साक्षात्कार ! तो साधनविहीन, साधनसम्पन्न और कुसाधनवाले - ये तीन प्रकार के लोग होते हैं भगवान व गुरु के मार्ग पर और इन तीनों को उठाया जाता है।''

सत्संग के साथ ही यहाँ के गरीबों में कम्बल व खजूर बाँटे गये तथा भंडारे का भी आयोजन हुआ।

धन्य हैं ऐसे महापुरुष जो स्वयं के कष्टों की परवाह न करते हुए समाज में सुख, शांति, आरोग्यता बाँटने हेतु अविरत भ्रमण करते हैं तथा सांसारिक वस्तुओं के अभाव में जी रहे लोगों को सांसारिक सुविधाएँ देते हैं और सांसारिक सुविधाओं में फँसे जनसामान्य को आध्यात्मिकता के प्रसाद से तृप्त कर देते हैं ! ❐

विद्यार्थी-उत्थान हेतु किये जा रहे सेवाकार्य
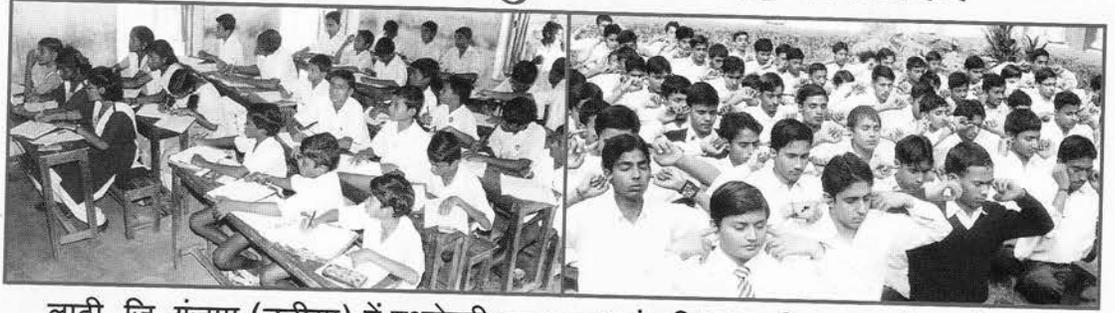
लाठी, जि. गंजाम (उड़ीसा) में प्रश्नोत्तरी द्वारा प्रज्ञा एवं प्रतिभा का विकास करते हुए विद्यार्थी तथा भिवानी (हरियाणा) में यौगिक प्रयोग करते हुए विद्यार्थी।

कोपर खैरना (नवी मुंबई) में भगवद्ध्यान का अभ्यास करतीं छात्राएँ तथा कर्जत, जि. ठाणे (महा.) में वैदिक मंत्र व सूक्ष्म यौगिक प्रयोग द्वारा आज्ञाचक्र को जागृत करने का अभ्यास करते हुए नौनिहाल।
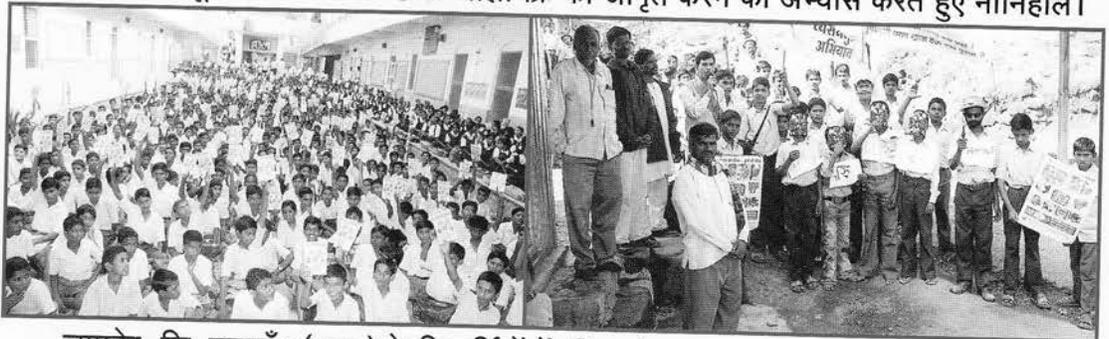
जामनेर, जि. जलगाँव (महा.) के विद्यार्थियों में 'दिव्य प्रेरणा प्रकाश' पुस्तक का वितरण तथा अंजनेरी, जि. नासिक (महा.) में बच्चों द्वारा व्यसनमुक्ति जागरण हेतु निकाली गयी संकीर्तन यात्रा।
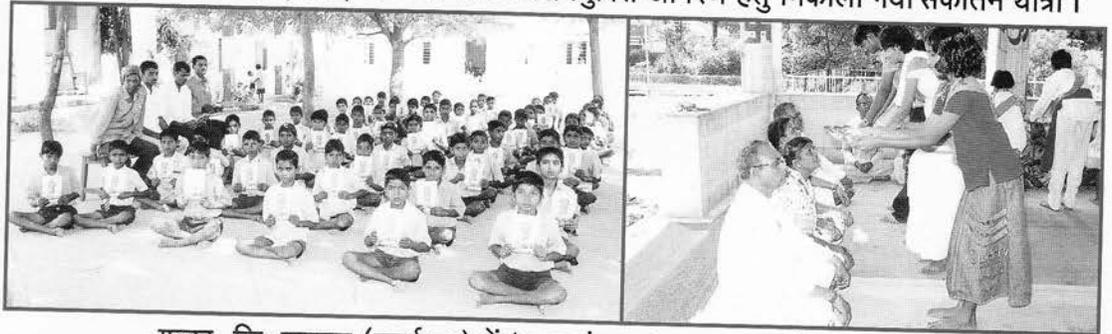
गब्बूर, जि. रायचुर (कर्नाटक) में 'बाल संस्कार' पुस्तक का वितरण तथा बल्लारपुर, जि. चन्द्रपुर (महा.) में बच्चों द्वारा माता-पिता का पूजन।

1 January 2009
RNP. NO. GAMC 1132/2009-11
WPP LIC NO. GUJ-207/2009-11
RNI NO. 48873/91
DL(C)-01/1130/2009-11
WPP LIC NO.U(C)-232/2009-11
G2/MH/MR-NW-57/2009-11
WPP LIC NO. MH/MR/14/09-11
'D' NO. MR/TECH/47-4/2009

गरीबों, असहायों एवं आदिवासियों हेतु सेवाकार्य

डेहरी, जि. धार (म.प्र.) में प्रतिमाह राशन-वितरण तथा निवाई, जि. टोंक (राज.) में बर्तन-वितरण।

कर्जत, जि. ठाणे (महा.) के आदिवासी क्षेत्र में भंडारा व कपड़े, मिठाई इ. का वितरण तथा कानपुर आश्रम में भंडारे का आयोजन। जप, कीर्तन व श्रीआसारामायण पाठ के उपरांत भोजन-प्रसाद, वस्त्र व कम्बल आदि का वितरण।

पाथर्डी, जि. अहमदनगर (महा.) में 'विद्यार्थी उज्ज्वल भविष्य निर्माण शिविर' के दौरान बालभोज का आयोजन तथा धुलिया (महा.) में अन्न-वितरण।

भोपाल (म.प्र.) क्षेत्र के गरीबों में तथा पिपाड़, जि. जोधपुर (राज.) के छात्रों में मिठाई, वस्त्र आदि का वितरण।

Posting at PSO Ahmedabad between 25th of preceding month to 10th of current month. * Posting at ND. PSO on 5th & 6th of E.M. * Posting at MBI Patrika Channel on 9th & 10th of E.M.